मंडावाके सराफ-वंशमें,

१९वीं सदीके उत्तरार्द्धमें दो दिग्गज समाजसेवी :

श्रीनाथूराम सराफ एवं श्रीमोहनलाल सराफ

[अलौकिक वरदानोंसे पूरित, जिन्होंने २०वीं सदीके मारवाड़ीसमाजके भाग्योदय वाली कीर्ति-परम्पराका वृहद् मंच तैयारकरनेकी कठिन साधनाएंकीथीं]

* सन् १९७८ के अंतिम दिनोंकी बातहै. कलकत्तामें श्रीरामकृष्ण सराफसे एक संक्षिप्त चर्चाहुई. उन्होंने हमें श्रीबालकृष्ण सराफका परिचयदेतेहुए, आग्रह कियाकि हम उनसे भेंटकरें. उसीदिन रातको हम श्री बालकृष्णजीसे उनके घरपर मिले. कलकत्तामें लगभग २८ वर्ष जीवन व्यतीतकरनेके बाद हमें पहली बार एक ऐसे युवकसे भेंटहुई, जो मनोयोग-सिद्धिके वरदानसे एक सक्षम चेतनाका युवक था. इनसे तीन-चार बार चिंतनमननका सुयोग-संयोग प्राप्तहुआ. एक योजना बनी. यह निर्णय हुआकि हम मंडावाकी यात्रा करलें, और मंडावाके सराफोंमें जो अद्वितीय स्थान रखतेहैं, उनमें नाथूरामजी सराफ और मोहनलालजीका इतिवृत्त तैयारकरदें. तत्काल हमने एक कार्यक्रम बनाया. ११ दिसम्बर १९७८ को प्रातः हवाईजहाज से हम दिल्ली गये, तत्काल वहांसे जयपुरका हवाईजहाज पकड़ा और हम जयपुर पहुँचे. और दूसरे दिन प्राइवेट टैक्सी लेकर, कालाडेरा होतेहुए, एक रात नवलगढ़में विश्रामकर, हम मंडावा पहुंचगये. मंडावामें हमारी यह चौथी यात्राथी. पर यहाँपर इसबार हम पहलीबार एक नये कार्यक्रमका अवलंबन लेकर, इस उद्देश्यपूर्तिके लिए पहुँचेथेकि कलकत्ताकी सूतापट्टीमें जिन सराफोंका नाम अमर है, उस गाथा को विशद प्रमाणोंकेसाथ प्रस्तुतकरें.

* नवलगढ़में श्रीब्रजलालजी पाटोदिया स्टेशनके सामने अपनी नवनिर्मित कोठीमें विराजमानथे. आपने भरापूरा आतिथ्य प्रदानकिया. आपसे भी हमें मंडावाके सराफ-वंशकी अन्य भूली-बिसराई कड़ियाँ प्राप्तहुईं.

* फिर १९७९ के जूनमासके तृतीय सप्ताहमें श्रीबालकृष्णजी सराफ हमें अपनेसाथ दुबारा मंडावा लेगये. उसकेबाद हमें वृन्दावनलेगये. १९७९ से १९८६ तक, इस सारी योजनाके मुख्य सूत्रधार श्रीबालकृष्णजी सराफही रहेहैं.

* इस सामग्रीको तैयारकरनेमें हमें श्रीभाई मदनलालजी सराफ, श्रीरामकृष्णजी सराफ, श्रीईश्वरीप्रसादजी गोयनका, श्रीसीतारामजी सेकसरिया, श्रीप्रभुदयालजी हिम्मतसिंहका, श्रीराधाकृष्णजी नेवटिया, श्रीबजरंगलालजी लाठ, श्रीबिहारीलालजी झुनझुनवाला, श्रीगुरुदेवजी खेमाणी प्रभृति सज्जनोंसे भरीपूरी आत्मीयता प्राप्तहुईहै. हम इनके प्रति अपने आभारको समवेत् करतेहैं.

*

शेखावाटीकी सामन्तीप्रथामें अग्रवालवैश्योंके नये थोक और उनके नये अभ्युदय

१. मंडावा-नगरकी नई बुनियाद, सामन्तीगढ़की संरचनामें सराफ-वंशका सशक्त हाथ

'सराफिया और सुलफिया दोनूं एकसमाना' !

सन् १९७८ के अंतिममासमें, दिसम्बरमें मंडावाकी यात्रासे पहले, जब हम जयपुरसे कारमें चलतेहुए, एक रात्रिकेलिए कालाडेरामें ठहरे, तो वहांपर एक वृद्ध सज्जनने पासमेंही अपनेपास बैठे, जयपुरके सराफ खानदानके एकपुत्र, अपने सालेपर यह उक्ति कसदी ! इसलिए, कि जैसेही वृद्ध सज्जनको यह मालूमहुआकि अब हम कालाडेरासे चलकर सीधे मंडावा पहुँचेंगे और वहांके सराफ-वंशके इतिहासकी खोजखबर निकालेंगे, तो अपने सालेपर मजाककी यह चोटकरनेमें उन्हें सहसा ही बहुत आनंद आया. हमने यह साखी सुनी, भगवानको धन्यवाद दियाकि मंडावामें पहुँचनेसे पहले, कालाडेराने यह साखी सुनाकर हमारी यात्राका शुभमुहूर्त निकालदियाहै. वृद्ध सज्जनकेपास बैठेहुए, हमने विनोदके वातावरणको पूर्ववत् रखतेहुए, उन वृद्ध सजनसे कहाकि हाथकी हाथ, इस साखीका अर्थ भी बतादीजिये. उत्तरमिला आनंदके लहजेमेंकि जितने सुलफिया होतेहैं, वे सुलफी तो अपनी रखतेहैं, पर सदा दूसरोंकी चिलममें उसे लपेट-लगाकर पीतेहैं. जितने सराफ आपको दुनियामें मिलेंगे, वे ऐसेही सुलफिया मिलेंगे. 'सुलफिया' याने गांजा-सुलफाको चिलममें फूंककर पीनेवाला ; सराफ याने सोनेचांदीका व्यापारी ; उनके घरोंमें जो पारिवारिक जेवर होताहै, उसकी कीमत दूसरेचुकातेहैं या दूसरोंके जेवरोंमेंसे वह अपनी सुलफी लगाकर चिलम पीलेताहै ! मतलब हुआ, वह दूसरोंके दिये स्वर्ण मेंसे अपने परिवारकेलिए बचालेताहै. और, सराफ ऐसावैसा सुलफिया नहींहोता, उसे जबतक एक खासकिस्मका गांजा चिलममें धरकर नहीं पिलायाजाता···वृद्धसज्जन अपनी बात पूरी कर भी नहींपायेथेकि उनके सराफ-वंशीय सालेसाहबने, जिनकी उमर पचाससे ऊपरकी होगी, नहलेपर दहला जमातेहुएकहा, "सराफिया और सिराजिया, दूजीजोड़ न मिले !"

यह सुननाथाकि आसपास बैठे और व्यापारी-दुकानदार भाईयोंने जोरका क़हकहा लगाया. सुनकर हम धन्यहोगये. सिराजी लोकभाषामें शिराजके उस उत्तमनस्लके घोड़ेको कहतेहैं, जिसका मूल्य घोड़ोंकी दूसरीनस्लोंसे सबसे उत्तम और ऊपर होताहै. यों भी शिराजी घोड़ा सैकड़ों कोसोंकी धावकगतिमें कभी मात नहीं खाता.

हमने सराफोंके ऊपर कसीगई दो फब्तियोंके ऊपर अपनी तीसरी फब्ती भी कसदी, "सराफोंसे सराफा, सराफेमें मुंह-बोली झंकार सिर्फ नूपुरोंकी !" सालेसाहबने बहुतजोर दियाकि इससाखीका दूसरा मिसरा सुनाइए, हमने कहाकि वह हम जैसे दाढ़ीवाले बाबालोगोंसे सम्बन्धित है. वह नहीं सुनायेंगे."

जब कालाडेरासे चले, तो जैसे अग्रिमरूपसे मंडावाके सराफ-वंशके इतिहासके सिंहद्वारकी कुंजी मिलचुकीथी. कार चली; प्राइवेट टैक्सी थी,इसके ड्राइवरने, जिसने दूरसे इस मजाककी मंडलीके कहकहे सुनलियेथे, अपनीओरसे अर्जकिया, "बाबूसाहब, मेरी भी एक गुजारिशहै. यह मिसरा जयपुरके सराफोंकाहै :

जयपुरका जौहरी, जयपुरका सराफ,
इक टका-कौड़ी बुहारी, दूजा ओढ़ै छटंकी लिहाफ !

सुनतेही हमारे मुंहसे निकला, "बहुतखूब, कमालकियाहै मिसरा कहनेवालेने. भला जौहरी एक टका या कौड़ी क्यों जानेगा, वह तो सदाही हजार लाखके हीरे-मोती बेचताहै. और भला सराफ छटांक या पाव क्या मोलेगा ; वह तो रत्ती-माशा-तोला, बस इतने वजनसेही साबका-रिश्ता रखताहै." हमारी प्राइवेट टैक्सी अब सीकर-नवलगढ़की दिशा, डामरकी सड़कपर, फर्राटेकी चालसे दौड़नेलगी. कालाडेरासे मंडावाका सड़कमार्ग लगभग ६ घंटेमें कारसे पूराहोलेताहै···

* * *　　　* * *　　　* * *

शेखावाटीमें सन् १७३० के बाद १२ गढ़-ग्राम बसे, और १२ प्रजा-ग्राम बसायेगये. यों लोकसमाजमें इनकेलिए 'शेखावाटीके १२ शहर' एक मुहावरा पड़गयाहै और जो चाहताहै, वह अपनी पसंदका और अपने पैतृकग्रामका नाम इस १२ की सूची में जोड़कर, इनकी संख्या पूरी करलेताहै. लेकिन सन् १७३० के बाद यथातथ्य ये १२ गढ़ग्राम बसे : १. फतेहपुर-शेखावाटी (१४वींसदीके आसपाससे आबाद), २. झूंझनूं (१०वीं सदीसे आबाद), ३. सीकर, ४. नवलगढ़, ५. खंडेला, ६. उदयपुर-शेखावाटी, ७. रघुनाथगढ़, ८. खेतड़ी, ९. मंडावा, १०. डूंडलोद, ११. लक्ष्मणगढ़, १२. सूरजगढ़.

अब हम १२ प्रजा-ग्राम लेतेहैं : १. रामगढ़-सेठोंका, २. चिड़ावा, ३. अलसीर-मलसीसर, ४. महणसर, ५. मुकुन्दगढ़, ६. बगड़, ७. चूड़ी-अजीतगढ़, ८. मंडरेला, ९. गाड़ोद १०. लोसल, ११. पिलाणी, १२. परसरामपुरिया, (नया और पुराना).

इस २४ की सूचीमें सबसे अंतमें १८६० में मुकुन्दगढ़ बसायागयाहै. जो भी मुकुन्दगढ़का निवासीहै, समझ लीजिए, अभी उसकी अकल कच्ची है, क्योंकि इस प्रजाग्रामकी आयुके हिसाबसे अभीतो इसके 'दूधियादांत' भी नहीं टूटेहैं.

इन २४ गढ़ग्रामोंमें और प्रजाग्रामोंमें जो मंडावा है, वह खस्तापनकी खसलतका सिरमौर शहरहै. जिसतरह नमकीन व्यंजनोंमें अजवायन-घीका मोयन देकर बनाईगई मठरी सबसे ज्यादा खस्ता होतीहै, उसीतरह मंडावाका हर बाशिंदा इसी खस्तेपनकी खसलत यानेकि विशिष्टताका गुण-विशेष लेकर मिलेगा. यह बात ऊपरके अन्य २३ गांवोंके किसी इन्सानमें न मिलेगी.

* * *　　　　* * *　　　　* * *

शेखावतोंकी पुरानी कहानी हम छोड़तेहैं. नवलगढ़के संस्थापक नवलसिंहजीसे अपना मंडावा-विषयक इतिवृत्त हाथमें लेतेहैं.

अगरचे नवलसिंहजीने नवलगढ़की स्थापना सन् १७३० के बाद शुरूकरदीथी, नवलगढ़के गढ़का मुहूर्त सन् १७३७में कियाथा. १७५२ से नवलसिंहजी नियमितरूपसे नवलगढ़में रहनेलगेथे, अन्यथा उससे पहले प्रायः कर झूंझनूंही रहतेथे. नवलसिंहजीका जन्म सन् १७१३ के आसपास हुआथा. इनके ५ पुत्र तो अवश्यही घोषितरहेहैं—१. नरसिंहदासजी, २. नाहरसिंहजी, ३. जालमसिंहजी, ४. दलेलसिंहजी, ५. लालसिंहजी. नरसिंहदासजीका जन्म १७३० के आसपास होलेताहै. नवलसिंहजीने सबसेपहले अपने इस ज्येष्ठपुत्र को, मंडावाके साथ १२ ग्राम और देकर, वहां बसवादियाथा. पहले मंडावामें कच्चागढ़ बनायागया. नरसिंहदासजीने यहां १७६० से स्थायीनिवास बनाया. उससमयतक, १५६७के बादसे, यहांपर नवलसिंहजीने इसके कच्चेगढ़को पक्का बनवादियाथा. पर, १७८७ में, ७४ सालकी उमरमें नवलसिंहजीके निधनपर, नरसिंहदासजीने ज्येष्ठपुत्रका अधिकार जतातेहुए, जब नवलगढ़पर अपना अधिकार करलिया, तो छोटाभाई नाहरसिंह मराठोंकी मदद ले आया. अमृतराव मराठा अपनी सेना चढ़ालाया. तब नरसिंहदासजीकी ठकुराणीने कटार निकालकर अपने देवर नाहरसिंहजीके हाथमें देकर कहाकि पहले अपनी भाभीकी छातीमें यह कटार मारदो, पीछे मराठे नवलगढ़में घुसेंगे. तो नाहरसिंहजीको २४ गांव और दे कर, मराठोंको राजीखुशी वहांसे वापस भेजागया. नाहरसिंहजीने तब महणसर बसाकर, वहीं अपनेको स्थिरकिया. नरसिंहदासजीका अधिकार नवलगढ़पर रहा, लेकिन रहे वे मंडावामें. नरसिंहदासजीका देहान्त लगभग ६० बरसकी उमरमें १७९२ में हुआ. उधर नाहरसिंहजीने गुहालेपर अपना अधिकारकरलिया. और, इस १७९२-९५ तक अग्रवाल-वैश्योंके विभिन्न थोक अपनी-अपनी पसन्दके गढ़ग्रामोंमें इसतरह आबाद होगये, कि उन गढ़ग्रामोंका राजपूती इतिहास तो मन्दबुद्धि राज-कुलका इतिहास रहगया, इन अग्रवालोंके थोकोंका इतिहास प्रबुद्ध अर्थसत्ताका ओजस्वी इतिहास होतागया. सारे भारतके अग्रवालोंके मध्ययुगके इतिहासका यदि नाभिनाल खोजनाहै, तो शेखावाटीके २४ ग्रामोंमें बसेहुए थोकोंकी सूची देखकर, सहजमें उसका पता किया जासकताहै.

* * *　　　　* * *　　　　* * *

यदि हम सारे २४ गांवोंके अग्रवाल-थोकोंकी पूरी गिनती गिनानेबैठें, तो वह विषयांतर होजायेगा. यह बात सचहैकि शेखावाटीके छोटेबड़े १२५ से ऊपरके ग्रामोंसेही ८५ प्रतिशत अग्रवालोंके थोकोंका ज्ञातिनाम १९वींसदीसे प्रसिद्धहुआहै. उदाहरणके रूपमें गुहालासे गुहालेवाला, झूंझनूंसे झूंझनूंवाला, फतेहपुरसे फतेहपुरिया, सीकरसे सीकरिया, केड़ से केड़िया, ढांढणसे ढांढणिया.

मंडावामें ढांढणिया, सराफ, लढ़िया, गोयनका, हरलालका, नेवटिया, चूड़ीवाला, मुत्सद्दी, चोखानी आदि ज्ञाति-परिवारोंके थोक आबादहैं. मंडावाके सराफ और ढांढनिया कलकत्ताके सामाजिक इतिहासमें, प्रथम विश्वयुद्धतक, इसतरह ऊपररहे, जैसे मंदिरके कलशसे भी ऊपर उसकी ध्वजारहतीहै ! इन दोनोंकेबाद नम्बर आताहै चोखाणियोंका, जिनकी सामाजिक कीर्ति ऐसी रहीहै कलकत्तामें १९२०-२५ तक, जैसे तो उड़दकी बनीहुई दालमें गरममसालेकी हुआकरतीहै !

शेखावाटीकी सामंतीप्रथामें अग्रवालवैश्योंके नये थोक और उनके नये अभ्युदयका जो परिपार्श्व है, उसके इतिहासिक विकासक्रमके विषयमें जेम्स टॉड, गौरीशंकर हीराचन्द ओझा आदि विद्वानोंने अपना कोई अध्ययन प्रस्तुत नहीं कियाहै. रामदेवजी चोखानीकेपास फतेहपुर-शेखावाटीके पं० सरूपराम इन्दौरिया नामके किसी स्वर्गीय विद्वानकी एक हस्तलिखित प्रतिथी, उसे उन्होंने हमें 'श्रीरामदेव चोखानी' ग्रन्थ लिखनेकेसमय, मंडावाके आदि-सन्दर्भ समझनेकेलिए, दियाथा. क्योंकि 'रामदेव चोखानी' ग्रंथकी संयोजन-समितिके पास फंडकी कमीथी, इसलिए मंडावाका आदि इतिहास उसमेंसे रोकलेनापड़ा. वह बात १९५८ कीहै. २८ सालहोगये. हमने 'श्रीरामदेव चोखानी' ग्रन्थमें, उसकी भूमिकामें, तब लिखाथा, "१९वींसदी बीतते न बीतते क्षत्रियोंका आत्मतेज, आत्मावलंबन, विरासतमें यहांके वैश्योंको अधिकाधिक मिलनेलगा, और देशके राष्ट्रीय क्षितिजपर राजस्थानके वैश्य सभी रीतिके विकासके प्रारम्भिक और प्रारब्धिक भूमिकाके अग्रणी पात्र बननेलगे. राजस्थानके ये सपूत बिल्कुल नए मानवीय मूल्योंको लेकर अपने घरोंसे और प्रान्तकी सीमाओंसे बाहर निकले. राजस्थानकी क्षत्रियशक्ति जब वयोवृद्ध हुई, पूरीतरह निर्वीर्य, श्रान्त और बूढ़ीहोचली, तब राजस्थानकी युवाशक्तिके रूपमें केवलमात्र ये राजस्थानी वैश्यही बचेथे !"

श्रीरामदेवजी चोखानीने हमें जो हस्तलिखित प्रति दीथी, उसमें भूमिकाकेबाद, एक पृष्ठमें शेखावाटीकी सामन्त प्रथामें अग्रवालवैश्योंके नयेथोक और उनके नये अभ्युदयके विषयमें पूरे पांडित्यका परिचय देतेहुए, पं॰ सरूपरामजी इन्दौरियाने अपनी आंचलिक भाषामें जो लिखाथा, उसे हम शुद्ध हिन्दीमें अनुवादकरके देरहे हैं, वह इसप्रकार था : "राजस्थानकी जो सामंती प्रथाहै वह परिपक्व रूपमें १४वींसदीसे मानीजासकतीहै, पर इसका निखार मुगलकालमें ज्यादाहुआ जब औरंगजेबकी मदांधता अधिक प्रमादी बनगई, तो राजस्थानकी भूमिके चप्पेचप्पेर राजपूतोंके जो छोटेछोटे कबीले बिखरेहुएथे, वे कमर कसकर तैयारहुए, और औरंगजेबके कबरमें पहुँचतेही, सारे राजस्थानसे नवाबोंकी हस्तीतकको उन्होंने जड़मूलसे उखाड़ फेंका, और अपनेअपने अंचलमें उन्होंने पूरे ठाठकेसाथ एक हिन्दूक्षत्रियराज्यकी नींव डाली ; ब्राह्मणोंकेलिए अधिकतम देवालय और पूजापाठकी व्यवस्था और स्थान-स्थानपर संस्कृत अध्यापनको प्रश्रय, हिन्दू वैश्योंकेलिए नईमंडियां और नये बाजार और नई हाटें और अपनेठिकाणोंमें उनकी नई हवेलियां चिनीजानेलगीं, इसकेलिए उन्हें सुविधायें दीजानेलगीं. क्षत्रिय हर पांच-सात कोसकेबाद एक गढ़ या एक गढ़ैया या एक 'कोठरी' लेकर बैठगया. ऐसेही नयेसमाजको एक व्यवस्थादेनेकेलिए शेखावाटीमें नईबुनियादपर २०-२५ गढ़ग्राम बसायेगये. और प्राचीन हिन्दू-तंत्रकी भांति, हर नये गढ़ग्राममें ग्रामकी संरचनाका और ठिकानेकी अर्धसत्ताका सरगना एक-एक वैश्य रहे, यह खुली छूट देदीगई. कमसे कम १७३० से १८३० तक ऐसा लगताथा, जैसे पुराण-कालका हिन्दूराज्य ही आगयाहै !"

इस ग्रंथमें मंडावाकी बसावटके विषयमें एक अतिदुर्लभ प्रमाण हाथलगताहै. दुखका विषयहैकि मंडावाके राजपरिवारके लोगोंने इसविषयमें अपनीओरसे इसप्रसंगको और अधिक लब्ध बनानेका कष्ट नहींकियाहै. तो, पं॰ सरूपरामजी इन्दौरियाने अपनी पुस्तकमें लिखाहै, "मंडावा फतेहपुरसे पश्चिम-दक्षिणमेंहै. झूंझनूंसे दक्षिण-पश्चिममें. यदि झूंझणूंसे फतेहपुरतक एक सीधीरेखा खींचीजाए, तो मंडावा बीचोंबीचमें पड़ेगा. अब मंडावाका एक दूसरा सच्चाहाल यहहैकि पूरबसे पश्चिममें एक रेखा खींचीजाए तो मंडावा से खेतड़ी पूरब-दक्षिणमेंहै. तो, हुआ ऐसाकि शेखावाटीके इस रेतीलेप्रदेशमें मंडावाके चारोंतरफ एक दुर्भेद्य बन था, उसमें दो कच्चे विशाल जोहड़ेथे, जिनके पास खेतड़ीके पहाड़ीजंगलोंसे दो शेर इधरके जंगलोंमें बसगये और उनकी संतति-प्रजा भी बढ़गई. फतेहपुरके दो सराफ थे, वे फतेहपुरसे इसी मंडावा होकर झूंझनूं आया-जाया करतेथे. एकबार उनका आमना-सामना मंडावाकी बनीमें एक शेरसे होगया. साथमें सरूपरामजी इन्दौरियाके दादा भी थे. तीनोंकेपास बस एकएक तलवारथी, ढालथी. तीनोंही कद्दावर, बलिष्ठ और दिलेरथे. तीनोंने खड़ेदम उस शेरको घेरलिया और मारगिराया. इतना ही नहीं, वे उस शेरको अपनी बैल-गाड़ीपर लादकर झूंझनूं लेगये. वहां उन्होंने उस शेरको शार्दूलसिंहजीको भेंटमें देदिया. शार्दूलसिंहजीने उनको झूंझनूं आकर बसनेका न्योतादिया. यह बात १७४० के बादकी है, याने संवत् १७९७ के बादकी. उन सराफ सेठोंने एकदम सटीक जवाब देते हुएकहाकि आपका नाम शार्दूल, हमने केवल एक सिंह माराहै. इस झूंझनूंमें हमारे लिए जगह कहांहै. हमें आपके किसी नये गढ़में जगह मिलेगीतो जरूर बसजायेंगे, पर मंडावाके उस जोहड़पर ही कोई गढ़ बणाओ, तो वहांबसेरा सबसे पहले करेंगे, वह सिंहभूमिहै !

शार्दूलसिंहजीने अपनेपुत्रोंपर निगाह डाली और नवलसिंहजीको मुखातिबहोकर कहाकि कुछ चाहिए तो बोलो, मेरेपास एक टक्करका शार्दूल खड़ाहै. नवलसिंहजीने हाथजोड़कर कहाकि यह सेठ हमें देओ, पहले इसकी हवेली बनेगी, और इसकी हवेलीकी दीवारसे सटाकर मंडावाका गढ़ खड़ाकरूंगा. दोनों सराफ सेठोंने शार्दूलसिंहजीसे कहाकि अब हमारी भी एक मांगहै. हमारी हवेलीकी नींवकी पहली ईंट आपके हाथसे धरीजायेगी. तो शार्दूलसिंहजीने हंसतेहुए मानलिया. दूसरेही दिन उस जोहड़ेके कूँटपर, जहांपर सराफ सेठोंने शेरको माराथा, अपनेहाथसे उन्होंने हवेलीकी नींवमें पहली ईंट रखकर मंडावाके ग्राम-गढ़की नींव रखी. जब यहाँ हवेली बनकर तैयारहोगई, तो नवलसिंहजीने इस हवेलीकी दीवारसे सटाकर 'कच्चिया गढ़' खड़ा करवाना शुरूकिया. 'कच्चियागढ़' बनतेही दोनों सराफ सेठ फतेहपुरसे उठकर मंडावामें आकर बसगये." मंडावाकी यह बसावट हम पूर्ण प्रमाणित मानतेहैं.

*** *** ***

यदि हम शेखावाटीके २४ नगरोंकी नगर-संरचनाके मापदंडोंका परीक्षण करतेहुए, मंडावाकी ग्राम-बसावट भी देखें, तो सामंती नगर न होकर, वह किसी वैश्य-प्रधान ग्रामकी रूपरेखाकोही संपुष्टकरताहै. मंडावामें सराफोंका अलग बासहै, ढांढनियाओंका अलग हिसाबदाराहै ; लाठ, चोखाणी आदिके अपने-अपने परिवार-गुच्छ हैं. मंडावा एक ऊंचे टीबेपर बसाहुआहै. पर यहाँपर पानी भूमिपर ठहरताहै. यहाँ पानी मीठाहै. यहाँकी भूमिमें एक धार्मिक आस्थाका आकर्षण है. यहाँसे जिन्होंने बाहर जाकर धन कमायाहै, उनके धनमें स्थिरतारहीहै.

२. सेठ नाथूरामजी सराफके वंशकी तिथियाँ, मंडावाकी बसावटकी तिथियोंका तलपट

इसके पूर्वकि हम नाथूरामजी सराफके वंशकी, मंडावा-आगमनके संदर्भमें, तिथियोंका प्रमाण दें, 'श्रीरामदेव चोखानी' ग्रंथके भूमिका-भागमें रामदेवजी चोखानीके पूर्वज मंडावामें कहाँसे आये, इसका सुस्पष्ट संदर्भ हमने उसमें लिखाहै; वहाँ कहागयाहै, "क्योंकि दिल्ली सल्तनतके शेखावाटीपर दोचार आक्रमण होचुकेथे, तो इस आशंकासे त्रस्तहोकर कि कहीं झूंझनूं के अपदस्थ कायमखानी नवाब लोग दिल्लीकी सहायता पाकर अचानक यहाँ आक्रमण न करदें, आशकरनजी

चोखानी १७६५ के आसपास, जबकि मंडावामें कचियागढ़की चुनवाई चलरहीथी, झूंझनूंसे उठकर मंडावा आगयेथे. रामदेवजी चोखानीने हमें बतायाकि जिन सराफोंने मंडावा बसानेका जिम्मालियाथा, वे धनाढ्य थे और उनका ही संकेतपाकर आशकरनजी उठकर मंडावा आयेथे. आशकरनजीका उन सराफोंसे व्यापारिक संबंधथा. आशकरनजीके पुत्र नैनसुखजी, नैनसुखजीके हुए बख्शीरामजी, और इनके पुत्र दौलतरामजी, पौत्र रामदेवजी. रामदेवजी चोखानीका जन्म १८७८ का था और उससे ५ साल पहले, सन् १८७३ में दिल्लीसे चलकर रेल रिवाड़ी पहुँचगईथी. मंडावासे चारदिन ऊंटोंपर चलकर, लोग रिवाड़ीसे कलकत्ताके लिए गाड़ी पकड़ा करतेथे !

*** *** ***

नाथूरामजीका इतिहास प्रारंभकरें, इसकेपहले यह जरूरी है, कि उनके पैतृक इतिहासपर एक नजर डाललें. इस वंशमें फतेहचन्दजीकी चर्चा आतीहै. इन फतेहचन्दजीका जन्म सन् १७८८ के आसपास हुआथा. इनके कितने विवाह हुए, इसविषयमें विशेष जानकारी नहीं मिलती. इनके पुत्र हुए : रामनारायणजी, बलदेवदासजी, नाथूरामजी, कुंजलालजी. रामनारायणजीने जल्दी ही छोटी-छोटी मुसाफरियोंमें मालवाकी ओर जाकर थोड़ा धनकमानेका सिलसिला शुरू करदियाथा. पर नाथूरामजीकी प्रारम्भिक कारुणिक जीवनकहानी पढ़कर यह एहसास होताहैकि इस कमाईसे परिवारके ६-७ जनोंका खर्चा कठिनाईसे ही चल पाताथा. ऐसीही त्रासदायक जिन्दगीके दौरमें नाथूरामजीने रामनारायणजीकी पत्नीसे निरादृत होकर एक दिन सहसाही असहाया-वस्थामें मंडावाका त्यागकिया. वे मिरजापुरकी ओर निकलभागनेकेलिए विवश रहगयेथे.

श्रीनाथूरामजी का इतिहास मंडावाके सराफोंके समग्र इतिवृत्तमें 'ब्रह्मगांठ' (जनेऊकी मुख्य गांठ) की तरह शोभितहै. नाथूरामजी तक मंडावाके सराफ-वंशमें सहसाही एक दरिद्रताका आरोप हुआ, तो वह अकेले सराफ-वंशपर आयाहुआ आकस्मिक अभिशाप नहींथा. वह सारे राजस्थानमें महासंकट स्वरूप आयाहुआ अभिशाप था. नाथूरामजी सराफकी जबरदस्त कहानी यदि बालचन्दजी मोदी समय रहते, 'देशके इतिहासमें मारवाड़ीजातिका स्थान', ग्रंथ (१९३९ में प्रकाशित) में न संलग्न करगये होते, तो सदाकेलिए नाथूरामजीकी कहानी अनन्त कूपमें समागईहोती.

१९ वींसदीके उत्तरार्द्धमें, कलकत्तामें अर्जितधनके बलपर, मारवाड़ीसमाजके पहले कोट्याधीश सेठ नाथूरामजी सराफ

बालचन्दजी मोदी लिखतेहैं : "कलकत्ताके मारवाड़ीसमाजमें नाथूरामजी सराफका स्थान बहुत ऊंचारहाहै. जिससमय अंग्रेजी आफिसोंमें खत्रियोंका बोलबाला होरहाथा, उससमय एक बहुतही साधारण अवस्थामें नाथूरामजी सराफने संवत् १८९६ (सन् १८३९, आयु लगभग २० साल) में अंग्रेजी आफिसोंमें प्रवेशकियाथा. अंग्रेजी आफिसोंमें प्रवेशकरनेवाले पहले मारवाड़ी नाथूरामजी थे. नाथूरामजीने किसप्रकार, किस अवस्थामें अपने जन्मस्थान मंडावासे आकर यहाँ अपनी उन्नतिकी, और किसप्रकार अपने सगे-संबंधियोंको बुलाकर सहारादिया, ये सबबातें न केवल ध्यानदेने योग्यहैं, किन्तु अनुकरणीय भीहैं. किसी भी जातिका अभ्युदय तभी होताहै, जबकि उसमें स्वनामधन्य सेठ नाथूरामजी सराफ जैसे जातिप्रेमी तथा कुटुम्बपालक सज्जन जन्म धारणकरतेहैं.

"नाथूरामजीका जन्म विक्रमी संवत् १८७४ (सन् १८१७) में हुआथा. नाथूरामजी जब १२-१३ बरसके हुए, तभी उनके माता-पिताका देहान्तहोगयाथा. तबसे घरका सारा प्रबंध उनकी भौजाई करनेलगीथी. कहाजाताहैकि नाथूरामजीकी भौजाई स्वभावकी बड़ी क्रूरथी और घरमें उसका शासन कठोर होताथा. नाथूरामजी अपनी युवावस्थामें बड़े बलवान और लम्बेचौड़े कदके व्यक्ति थे. उन्होंने मंडावामें खेतीकरना शुरूकिया. केवल अपने पुरुषार्थसे वे सैकड़ोंबीघा जमीनकी खेतीकर अपने गुजारेके लायक अन्नादिकी उपज करलेतेथे. एकदिनकी बातहैकि जब वे अपने खेतसे लौटकर अपने घरपर आये, तो क्यादेखतेहैंकि छोटीबहनको किसी कसूरपर भाभी माररहीहै. यह देख उन्होंने इसका प्रतिवादकिया, परन्तु प्रतिवादसे भौजाई कब शान्त होनेवालीथी. वह उन्हें भी मारनेदौड़ी. नाथूरामजी अपनी भौजाईको मातासे बढ़कर मानतेथे. अतः उसका सामना न कर, चुपचाप अपना 'गंडासा' लेकर वापस खेतमें चलेगये. इस घटनासे उनके मनपर बड़ा असरहुआ, और वे घर छोड़कर निकलपड़े."

पर नाथूरामजी आज मंडावाके लोकांचलोंमें चित्र-विचित्र प्रकारकी जनश्रुतियोंमें जीवित बनेहुएहैं. वे मंडावासे हठात् क्यों अनाथावस्थामें भागनिकले, इस विषयकी तीन अनुश्रुतियां हम अवश्य देना चाहेंगे.

पहला किस्सा यों सुनाजाताहैकि एकदिन नाथूरामजीने भाभीसे कहाकि तू भाईको तो रोटियोंमें घी परोसतीहै, मुझे सूखे रोट घालतीहै. तो कहाजाताहैकि देवर द्वारा घी मांगनेपर भाभीको इतना रोष आयाकि वह चूल्हेमेंसे जलती लकड़ीलेकर नाथूरामजीको मारनेदौड़ी और उसे जबतक गांवकी सीमासे बाहर न करदिया, वह उसे मारनेकेलिए उसके पीछे दौड़ती ही रही. तो नाथूरामजी गांवके बाहरसे फिर वापस न आये और बड़े कष्ट सहतेहुए, मिरजापुर पहुँचे.

दूसरी अनुश्रुतिको मंडावामें मंडावा-वंशके मुनीम लादूरामजीने इसप्रकार सुनाया : "नाथूरामजी कलकत्ता किसकारणसे चलेगयेथे, इसकी जनश्रुतिही सुननेको मिलतीहै, और वह बात तो अब दंतकथासी होगईहै. मंडावाके पासमें देहातहै मीठवास, जहाँसे ईंधन बटोरकर लायाजाताहै. वहाँसे नाथूरामजी रोजही ईंधन बटोरकर सिरपर रखकर लायाकरतेथे. वे लाते, तभी रोटी पकती. घरमें उनके भाभी थी. यह ईंधन खेतोंमें पड़ारहताहै, वह बटोरकर लायाजाताहै. कहाजाताहैकि एक दिन जिस खेतसे वे ईंधन बटोररहेथे, उस खेतकी खेतवाली वहाँ आगई और उनको खूब धमकाया. कहाजाताहैकि उसने उनको पीटदिया. तबतक नाथूरामजीकी उमर यही १५-१८ की रहीहोगी. उसबातसे उनको बहुत दुःखहुआ और उसबातसे दुःखीहोकर वे घर लौटकर नहीं आये और सीधे कलकत्ता चलेगये. जब चारपांच साल बाद वे कलकत्तासे कमाकर लौटे तो उस खेतवालीको बुलाया और उसका लेदेकर मानकिया और कहाकि तुम हमारी माँ हो, उसदिन हमको धमकाते नहीं या पीटती नहीं, तो उसबातका विचारकर हम कलकत्ता नहीं जाते. इसलिए हम शुभ मानतेहैं, कुशुभ नहीं मानतेकि तुमने हमारा अनादरकिया. हमने कभी यह बात नहीं सुनीकि वे अपनी भाभीसे अनादृतहोकर कलकत्ता गयेथे."

हमें ऐसा प्रतीतहोताहै, कि उधर भाभी वाली बात, और यह जाटनीवाल बात दोनों ही सचहैं. नाथूरामजीने इसतरहके दोतीन अपमान अपने गरीबीके दिनोंमें सहेहोंगे ; आखिर भाभी वालीबातसे प्रताड़ितहोकर वे कलकत्ताकी ओर निकलगयेथे. श्रीबालचन्दजी मोदीने जो भाभीकी बात लिखीहै, वह मंडावाके सराफ-परिवारमें स्थिरबनीहुई अनुश्रुतिके बलपर ही है. पर, इस भाभीकी घटनासे अलग, हमारा दृढ़ विश्वासहै, एक सबल कारण और था. उनका जो पहला विवाह हुआथा, वह पहली पत्नी भी उनकी उस गरीबीमें, शायद जापेमें, या उनयुगोंमें तीव्रतासे चलनेवाली किसी बिमारीमें जाचुकीथी[१] और वे उसके विरहमें यों भी दुखी और त्रस्त चलरहेथे. तो, घरसे जब भागे, उससमय वे अपने जीवनमें अकेलेथे और निस्सहाय निरावलम्बनके थे. उनका दूसरा विवाह तो कलकत्ता जानेके बाद ही संभव हुआ होगा. इस पत्नी-विरहका प्रमाण नीचेकी तीसरी अनुश्रुतिमें व्याप्त है, और इसका अपना एक अलग ही रसास्वाद है. इसे श्रीजानकीलाल शाहने मंडावामें सुनाया, "नाथूरामजी सराफके विषयमें हमने यह सुनाहैकि वे बीड़मेंसे लकड़ीलाते, तब उनकी भाभी उनको रोटी बनाकर देती. एकदिन नाथूरामजी ईंधन बटोरकर नहीं लाये, तो भाभीने भी रोटियां नहीं बनाईं. जब नाथूरामजीने रोटियाँ मांगीं, तो भाभीने कहाकि आज तू लकड़ियां लाया नहीं, बिना लकड़ियोंके मुझसे रोटियाँ नहीं होतीं. अब तुझे अगर बिना लकड़ी बीने रोटियाँ खानीहैं, तो बियाह कराला, और उस बींदणीसे रोटी कराये और खाये. इस तानेसे नाथूरामजी घरसे निकलपड़े. मार्गमें उनको लकड़ियोंका गाड़ामिला. किसीने कहाकि शकुन खोटा होगया. नाथूने कहाकि मेरा तो शकुन खोटा नहीं हुआ. क्यों ? जब कारण पूछा, तो नाथूरामजीने कहाकि मेरा शकुनतो अच्छाही हुआ. मेरे यहाँ तो इतनेही गाड़े रोज लकड़ियोंके जला करेंगे." होसकताहै, परिश्रम करनेपर कतिपय अन्य चित्रविचित्र जनश्रुतियाँ भी इस संदर्भमें प्राप्त होजाएं.

* * *　　　* * *　　　* * *

अब हम पुनः श्रीबालचन्दजी मोदी द्वारा प्रस्तुत घटना-प्रसंगका क्रम पढ़ें : "उनकी उमर उससमय केवल २० बरसकी थी (और सन् १८३७ होगयाथा). अपने घर मंडवासे चलकर वे मिरजापुर पहुंचे.[२] मिरजापुर उससमय व्यापारका केन्द्रथा. सेठ सेवाराम रामरिखदास सिंहानियाकी गद्दी बड़ीप्रसिद्ध थी. नाथूरामजी उसीदुकानपर पहुँचगये. उससमय रेल नहीं बनीथी. बंगालका व्यापार नौकाओं द्वारा होताथा. सेवाराम रामरिखकी नौकाएं माललेकर कलकत्ता जारहीथीं. नाथूरामजी उन नौकाओंके चढ़नदार (व चौकसीवाले) बनकर कलकत्ता आये इस चढ़नदारीके लिए उन्हें ५ रुपये नगद तथा रास्तेकेलिए खानाखर्चा मिलाथा. यह घटना विक्रमी संबत १८९४, ईसवी सन् १८३७ कीहै. कलकत्तामें उससमय 'सेवाराम रामरिख' की दुकानके गुमाश्ते रामदत्तजी गोयेनकाथे. नाथूरामजीका साहस और नौकाओंके प्रबंधसे खुशहोकर उन्होंने दो रुपये मासिक और रोटी-कपड़ेपर उन्हें नौकर रखलिया. वे रामदत्तजीकेलिए रसोई बनानेलगे. यहाँ पर यह बतलानाभी आवश्यकहैकि नाथूरामजीकी, शरीरके हट्टेकट्टे होनेके कारण, खुराक बहुतथी. यहीकारणहैकि उन्होंने रसोइया बनना पसन्दकियाथा. उन्हें घरकी तो कोई झंझट थी नहीं. पेट भर भोजन करते और मस्तरहते. जो दोरुपया वेतन मिलता, उसे गद्दीसेलेकर कबूतरोंको मटर डालदियाकरतेथे. रामदत्तजीने सुना, कि नाथिया अपने वेतनके दो रुपये लेकर प्रतिमास कबूतरोंको मटर खिलादेताहै. तो उन्होंने नाथूरामको बुलाकर कहाकि मटरकेलिए दोरुपये गद्दीसे लेलियाकरो. नाथूराम तब क्याकरते. दो रुपये वेतनके, दो रुपये रामदत्तजीके दियोड़े, चार रुपये

---

१ मंडावाके सराफ-वंशसे साधिकार सूचनायें मिलतीहैंकि नाथूरामजीने तीनविवाह किये. उनकी पहली पत्नीसे क्या संतानहुई, सूचना नहीं मिलती. उनकी दूसरी पत्नीसे एक पुत्र बालमुकुन्द हुआ. उनकी तीसरी पत्नीसे ३ पुत्र हुए. तीसरी पत्नीसे जात, ज्येष्ठपुत्र देवीबक्सजीहुए.

२ श्रीरामदेवजी चोखानीने इस विषयमें सूचनादेकर हमें उपकृतकियाथाकि नाथूरामजी जगह-जगह नौकरीकरतेहुए, मजदूरोंका सा जीवन बितातेहुए, पूरे पांच महीनोंमें मिरजापुर पहुँचपायेथे.

कबूतरोंको मटर डालनेमेंही खरचकरते. यह अवस्था कई महीनोंतक चली. इसकेबाद, दोनोंसमय रसोई बनानेकेबाद, उन्हें जब अवकाशमिलता, तो वे सूतापट्टीमें चले जातेथे और दोचार दिनोंमें एक-दो गांठकी दलाली करलियाकरतेथे. परन्तु यह होनेपर भी उन्होंने रसोई बनाना नहीं छोड़ा."

नाथूरामजीको वाणिज्य-लक्ष्मीकी जयमाला सहसा प्रदत्तहुई !

उससमय अंग्रेजोंकी आंफिसका काम प्रायः खत्रीलोगोंके हाथोंमें था. "परन्तु वे लोग आरामतलब होचलेथे. समयपर पूरा काम न करनेकेकारण आफिसोंके अंग्रेज उनसे नाखुश रहनेलगे. एकसमयकी बातहैकि 'सेवाराम रामरिख' के मुनीम रामदत्तजीने नाथूरामको मालकी डिलेवरी लिखानेकेलिए 'किंसल एंड घोष'की आफिसमें भेजा. यह आफिस किंसल साहब और गोपालचन्द्र घोष के साझेमें चलतीथी. और उससमय बड़ी आफिसोंमें इसकी गणनाहोतीथी. इसी किंसल एंड घोष कम्पनीका आगेचलकर 'होरमिलर कम्पनी' नामहोगया, जोकि अबतक बड़ेमजेमें चलरहीहै. तो, नाथूरामने आफिसमें जाकर माल डिलेवर लिखादिया. परन्तु मौसम गरमीकी थी. अतः वे उसी गोदाममें सोगये. थोड़ीदेरबाद, किंसल साहब जब गोदाममें आये, तो एक अपरिचित व्यक्तिको सोया देख उसे जगाया और परिचय पूछा. तो नाथूरामने जवाबदियाकि मैं कपड़ेका दलाल हूँ. यह सुनकर किंसलसाहब नाथूरामको आफिसके कमरेमें लेगये और किसी नयेमालके कुछ नमूने दिखाकर पूछाकि यह माल किस भावमें बिकसकताहै. जिसव्यक्तिका दिन फिरताहै, उसकी बुद्धि भी वैसाही चमत्कार दिखाने लगतीहै. साहबको निश्चयहोगयाकि यह व्यक्ति कामको जाननेवालाहै. साहबने कहाकि इस भावमें क्या तुम माल बेचसकतेहो ? नाथूरामजीने कहाकि जितना माल आप बेचनाचाहें, मैं बेचसकताहूँ. साहबने बतायाकि इतना माल हमारेपास तैयारहै. पर माल तीन दिनके अन्दर डिलेवर करानाहोगा. नाथूरामजी मालका नमूनालेकर बाजारमें आये. पहलेपहल उन्होंने रामदत्तजीको नमूने दिखाये. पता चलताहैकि किंसल एंड घोष कम्पनीमें छींटका काम बड़ापुरानाहै ; और अबतक होरमिलरकी आफिस इसीसे प्रसिद्धहै उससमय निक्कामल खत्री इस आफिसके दलाल थे. छींट आदिका सबसे अधिककाम 'सेवाराम रामरिख' के फर्ममें होताथा, अनबन होनेसे निक्कामलने 'सेवाराम रामरिख' को माल बेचना बन्दकरदियाथा. रामदत्तजी चाहतेथेकि किंसल एंड घोषका माल उन्हें मिले. यही कारणथाकि रामदत्तजीने बाजारभावसे भी कुछ अच्छी दर दी. इसके अतिरिक्त दूसरे फर्मोंका भी आर्डरलेकर नाथूरामजी आफिसमें पहुँचे. नाथूरामजीकी दर सुनकर अवश्यही किंसल साहब खुशहुएथे, परन्तु उन्हें विश्वास नहीं हुआकि नया दलाल जो दर देताहै, वह वास्तवमें ठीकहै. इसका कारण यह थाकि निक्कामल जो दर देतेथे, वह इससे कमथी. परन्तु निक्कामलका काम लापरवाहीसे होताथा, जिसके कारण मनमानी दर दीजातीथी. साहबने एक बंगालीको नाथूरामजीकेसाथ इसलिए भेजा, कि वह व्यापारियोंसे मालूमकरेकि असलमें उनका औफर ठीकहै या नहीं. बंगाली साथमें गया. और पूछनेपर मालूम हुआकि औफर ठीकहै. साहब बहुत खुशहुआ और उसने प्रायः चारपांच हजार पेचक सेल करदिये.

"नाथूरामजीके हाथ माल सेल करनेकेबाद जब निक्कामल चारबजे औफिसमें पहुँचे, तो उससमय नाथूरामजी भी साहबकेपास बैठेहुएथे. निक्कामलको आयादेखकर, साहबनेकहाकि बाबू निक्कामल, अब तुम बड़ा आदमी होगयाहै. बागबगीचोंमें रहनेलगाहै. आरामतलबी चाहताहै. अतः हमने तुम्हारेलिए एक सहकारी तजबीज किया है. आजसे तुम्हारा और इस नाथूरामका आफिसके काममें साझारहेगा और तुम्हें आराम मिलेगा. साहबकी यह बात सुनकर, यह कब संभवथाकि निक्कामल उसे स्वीकारकर-लेते. उन्होंने कहाकि यह हो नहीं सकता. इसपर साहबने कहाकि अच्छा, आजसे हम नाथूरामको न केवल दलालही नियुक्तकरतेहैं, किन्तु बेनियन भी बनातेहैं. निक्कामल साहबको सलामकर चलेगये और उसीदिनसे नाथूरामजी औफिसमें स्थायीरूपसे कामकरनेलगे.

"नाथूरामजीने सूतापट्टीमें आकर यह ऐलानकरदियाकि 'किंसल एंड घोष कम्पनी' का माल कोईभी मारवाड़ीभाई बेचसकताहै. मैं सभीको आधी दलालीदूँगा. इसबातका बहुत अच्छा असर पड़ा. एक ओर तो जातिभाईयोंको दलालीका सहारामिला, और दूसरी ओर जो काम निक्कामल लापरवाहीसे करतेथे, वह बड़ी तेजीकेसाथ होनेलगा और परिणाम यहहुआकि किंसलसाहब और गोपाल घोष दोनोंही नाथूरामजीको अधिकाधिक चाहनेलगे. नाथूरामजीका भाग्यसूर्य उदयहोगया.

कलकत्तामें सराफ-वंशके अन्य परिवारोंका आगमन, आधी सूतापट्टी सराफोंकी और मंडावा-वालोंकी हुई !

नाथूरामजीमें कुटुम्ब-पालन और जातिभाईयोंको चाहनेकी भावना जागपड़ी. वे ज्योंज्यों बढ़तेगये, त्योंत्यों मंडावासे अपने कुटुम्बी सराफ-भाईयों तथा अपने भांजे और दोहितोंको बुलाकर औफिसके काममें लगानेलगे. तथा सूतापट्टीमें दूकानें खुलवानेलगे. यदि यह कहाजाएकि सूतापट्टीमें अन्य ग्रामवासियोंकी अपेक्षा सबसे अधिक दूकानें मंडावाकी खुलीं, तो इसकेकारण नाथूरामजी ही थे. सच तो यहहैकि उन्होंनेही श्रीयुक्त गणेशदासजी, गंगारामजी, बलदेवदासजी, कुंजलालजी, हरकिशनदासजी, उदयरामजी, गोगराजजी, और मोहनलालजी आदि अनेक सराफोंको बुलाकर कामपर लगाया. ये लोग आगेचलकर प्रायः सभी धनशाली बनगये. और आज भी कई एक फर्मोंकी बड़ी उन्नत अवस्था देखीजातीहै. इसके अतिरिक्त

श्यामदेवजी भौतिका तथा हुकमीचन्दजी चौधरी आदि इनके संबंधीथे, उन्हें भी बुलाकर काममें लगाया, जिनमें हुक्मीचन्द सागरमल तथा श्यामदेव रामदेव आदि फर्म चलानीवालोंमें बड़ेप्रसिद्ध हुए. लिखनेका मतलब यहहैकि नाथूराम बड़े जातिप्रेमी और कुटुम्बपालक हुए.

*** *** ***

"कहाजाताहैकि नाथूरामजी बड़े दबंग आदमीथे. आजकल चितपुररोड और हरिसनरोडकी मोड़पर जहाँ अखयबाबू डाक्टरका दवाखानाहै, उसस्थानमें उससमय एक पक्का बड़मकानथा. और खाली पड़ारहताथा. उससमय पुरानेविचारके लोग उस मकानमें भूत-प्रेतका होना मानतेथे. परन्तु नाथूरामजीको भूतप्रेतका कोई डर नहींथा. उन्होंने उसमकानको लीजपर लेलिया और घरसमेत रहनेलगगये. उसीमें अपनी गद्दीका काम भी खोललिया. सर्वसाधारण भाईयोंकेलिए उन्होंने उसी मकानमें एक ऐसा बासा बनादिया, कि कोई भी मारवाड़ीभाई अपनी इच्छासे और सुभिस्तेके अनुसार खर्चदेकर या बिना कुछदिये वहाँ भोजन पासके तथा उसीमें रहसके. एक बासा वैश्योंके लिए तथा एक ब्राह्मणोंकेलिए, इसतरहकी सुविधाकरदी. कहाजाताहैकि उसमकानमें तीन चौक थे, जिसमें एक चौकमें उन्होंने गद्दी कायमकी, एक चौकमें स्त्रियोंका रहवास बनाया और तीसरेचौकमें सर्वसाधारण मारवाड़ी वैश्यभाईयों और ब्राह्मणोंकेलिए बासे तथा रहनेका प्रबंधकरदिया.

*** *** ***

"संवत् १८९५ (सन् १८३८) सेलेकर विक्रमीसंवत् १९२६ (सन् १८६९), अर्थात् ३० वर्षतक नाथूरामजी लगातार उक्त आफिसका काम करतेरहे. इसकेबाद, विक्रमी संवत् १९२६ (सन् १८६९) में वे अपने मुनीम गणेशदासजी मुसद्दीको अपनी ओरसे पूर्ण अधिकारदेकर, स्वयं अपने जन्मस्थान मंडावा चलेगये—और सबकाम गणेशदासजी सम्हालनेलगे. कहाजाताहैकि नाथूरामजीके देश चलेजानेपर गणेशदासजीने अपना दबदबा इतना बढ़ायाकि आफिसके साहब गणेशदासजीको बहुत चाहनेलगे. उन्होंने नाथूरामजीको देशसे बुलाकर कहाकि ऑफिसमें गणेशदासका आधाहिस्सा उन्हें करनाहोगा. परन्तु नाथूरामजीने यह स्वीकार नहींकिया और कहाकि यदि आप चाहतेहैं तो सब अधिकार गणेशदासको देसकतेहैं. नाथूरामजी सलामकर लौट आये. उसीदिनसे ऑफिस गणेशदासजीके हाथमेंआगई; जोकि आज भी, होरमिलरका नाम परिवर्तन होनेपर भी, उनके यहाँ बनीहुईहै.[१]

"नाथूरामजीके ~~पांच~~ चार पुत्र और तीन कन्याएँ हुईं. पुत्रोंकेनामहैं—बालमुकुंद, देवीबक्स, ~~लक्ष्मीनारायण~~ रामचन्द्र और बृजमोहन."

* * * * * * * * *

हमने ऊपरही कहाहैकि नाथूरामजी जनश्रुतियोंमें जीवितहैं. ऊपर एकप्रकारकी अनुश्रुतिहै. इसीप्रसंगकी दूसरी अनुश्रुति इस प्रकारहै : हमने ९ जून १९७९ को श्रीसीतारामजी सेकसरियाका एक वाणी-अंकन, सराफ-वंशकी कहानीके संदर्भमें किया, तो नाथूरामजी सराफकी जो कहानी उन्होंने सुनाई, उसमें एक दूसरा श्रुति-माधुर्य कथा-प्रसंग मिला. हम यहाँपर उनका पूरा वक्तव्य अविकलभावसे देरहेहैं, सचमुचही पढ़नेकी चीजहै. सेकसरियाजीने कहा, "मंडावाके सराफोंमें एक फर्म और था 'नाथूराम सराफ' नामसे. यह नाथूरामजीके जमानेमें नहीं हुआथा, कलकत्तासे चलेजानेपर, उनके बाद हुआथा. वे भी बहुत जबरदस्त आदमी थे, योद्धा टाइपके आदमीथे. उनकी बहुत कहानियाँ चलती हैं. वे बहुत गरीबीसे आयेथे. बड़ी रिणीकिणी के आदमी थे. इस सराफ-कुटुम्बमें सबसेपहले नाथूरामजी सराफ हुए, देवीबक्सजीके पिता. वे अपने ढंगके एकही हुए. मैंने नाथूरामजीके बारेमें सुनाही सुनाहै. देखा कुछ भी नहींहै. जो सुनाहै, वह दिलचस्पहै, अच्छाहै. वो गरीब थे, गरीबीका काम करतेथे. एकबात यहकि वे चेजे या भाटेका काम करतेथे. दूसरा यहकि उनकी भाभीने उनका अपमानकिया. वे पैदल मिरजापुर आये. उनके पास पैसा नहींथा. बड़ी मुश्किलसे, कष्टसे, मेहनतकरते वहाँ तक आयेथे. वहाँ सेवाराम कालूराम फर्मथा. नामी और अच्छा फर्म था. तो उनके यहाँ नियम थाकि उनके यहाँ कोई भी आजाए, तो बासाथा उनका. यह सिंहाणियोंका फर्म था. नामी फर्म था. इस बासेमें खाओ और रहो. जब उन्होंने वहाँ खापी लिया, तो सेठोंने उनसे पूछा. उन्होंने कहाकि मैं पढ़ालिखा नहींहूँ. काम भी कुछ नहीं जानता. मेहनत करना जानताहूँ. मुझे काम बतादीजिए, उसको मेहनतकेसाथ पूरा करूंगा. ईमानदारीके साथ पूरा करूंगा. तो उन्होंने उसे अपने घरके काम बतादिये. तो उन्होंने वह काम बहुत बढ़िया किया. तो वे उनपर फिदाहोगये. उनको खाना और दोरुपया महीना,

---

[१] यह नियतिका चक्र अपने नियमोंसे चलरहाथा. नाथूरामजीने अपने बुद्धिबल और कठिन श्रमसे यह आफिस निक्कामलजीसे हस्तगत करलियाथा. अब जबकि नाथूरामजी स्वयं देशमें ज्यादा रहना चाहतेथे, क्योंकि उनकी आयु ५२-५३ सालकी होगईथी, तो उनके प्रमुख दलाल गणेशदासजीने अपने बुद्धिबल और कठिन श्रमसे यह अधिकार नाथूरामजीसे हस्तगत करलिया. निक्कामलजीने आधाहिस्सा स्वाभिमानकेकारण देना स्वीकार नहीं कियाथा, नाथूरामजीने भी अपने स्वाभिमानका पहलू अंगीकारकिया. कंपनीके प्रमुख दलाल और बेनियनहोनेका अधिकार सहर्ष अपने मुनीमके हितमें समर्पितकिया और कलकत्तासे अपनेस्थानको भी सदाकेलिए रिक्त करदिया.

उनदिनों दो रुपया बहुत था. हमने सुनाहैकि वे दो रुपयोंका अनाज कबूतरोंको डाल दियाकरतेथे. अपना कुछ खर्चा नहीं और मजे में रहते. दो रुपया महीनेपर लेकर बाजारसे अनाज लाकर कबूतरोंको डालतेरहते. काम बहुत करते. काम इतना करते, कि चार आदमी करसकें, उतना काम करते. सो लोग उनसे प्रसन्न थे, बहुत अच्छेमानेजानेलगे. उनका नाम वहाँ नाथिया था. उनदिनों व्यापार खत्रियोंका था. जितना व्यापार विदेशसे होताथा, उसकी बेनियनशिप खत्रियोंके हाथोंमें होतीथी. तो खत्रियोंमें एक आदमी था निक्कामल. अच्छा तेज आदमी माना जाताथा. वह अपने आफिसका बेनियनथा. वह माल 'कालूराम सेवाराम' को भेजाकरता था. तो माल लेकर वे मिरजापुर गये. उनकी वहाँ बहुत खातिरहुई. खातिर करनेवाला वह नाथिया. मेहनत बहुतकरे. काम किया तो वह उनकें बहुत पसंद आगया. तो उन्होंने उनसे कहाकि नाथियाको हमें देदीजिये. उन्होंने कहाकि आप मांगेंगे तो हम देंगेही, हमारे घरमें भी यह बहुत इम्पोर्टेंट है. लेकिन यह कुछ खाता बहुतहै. जरा इसका ख्याल रखियेगा. हमारे यहाँ तो यह मजेमेंहै. लेकिन यह कुछ खाता बहुतहै. जरा इसका ख्याल रखियेगा. हमारे यहाँ तो यह मजेमें खाताहै. बोलोकि मौज करेगा. इसे कोई तकलीफ नहीं होगी. वे उसे कलकत्ता ले आये. अब वह उनका काम करनेलगा. वे उसपर प्रसन्नहुए. पहले घरका काम किया. फिर बोलेकि अब तुम कोई काम नहीं करोगे. केवल मेरा कामही करोगे. आफिसमें आऊँ, तो मेरेलिए जल और कलेवा ले आयाकरो और यह करादियाकरो. वे कलेवा लेकर जातेथे चाँदीके बर्तनोंमें और जल लेकर जातेथे. खातेपीतेथे. उनदिनों, सुनाहै, माल नहीं बिका, बाजार मंदाहोगया. छींटका कामथा. उधर निक्कामल साहबकेपास जाता नहीं था, क्योंकि वह तो मालकी खपतकी रिपोर्ट चाहताथा और कहताकि माल बेचो. तो उसदिन निक्कामलजी आफिस नहीं आये. देरीहोगई, नहीं आये. उधर नाथिया कलेवा लेकर गया. निक्कामल मिले नहीं, तो वे उनकी राहमें वहीं गद्देपर सोगये. उस गद्देपर, जिसपर निक्कामल बैठताथा. तो साहब आया निक्कामलको देखनेकेलिए. पर वह तो वहाँ नहीं. वहाँ नाथिया सोरहाथा. उसे साहबने पैरसे जगाया. पूछाकि तुम कौनहो. यहाँ कैसे आयेहो, क्यों आयेहो. बोलाकि उनका नौकर हूँ. ऐसा काम करताहूँ. कैसे नौकर हो. तो कहाकि ऐसा करताहूँ, बनियाहूँ. साहब जोरसे बोलाकि बनिए हो. तो ऐसा काम क्योंकरतेहो. बोलाकि रोजगार मिलता नहीं, इसलिए करताहूँ. साहबने पूछाकि क्या तुम व्यापार करसकतेहो. बोलाकि जो बताओ, करसकताहूँ. अच्छा, यह मालहै, इसे बेच सकतेहो. तो उसे पाटा दिया, कपड़ेके नमूनेको पाटा कहतेथे. बोलेकि जाओ, इसका निगाह करो. अब वह किसीको जानता नहीं. वह तो केवल कालूराम सेवारामकी गद्दीको जानताथा, वहाँ गया. वहाँ जाकर कहाकि यह चीजहै. साहबने भेजाहै. हमारा मालिक तो आया नहीं, इसलिए हमको भेजाहै. आप बेच सकतेहैं क्या. उससमय साढ़े पाँच आनाथा, पर उन्होंने इतना कम दाम लगायाकि या तो मिलेगा नहीं, और अगर मिलेगा तो हरजा नहींहै, तो उन्होंने अपना दाम बतादियाकि इतने में होसकताहै. तो पूछाकि कितनी गांठ. जवाब मिलाकि कमसे कम ५० गांठ लेसकतेहैं. ज्यादा भी लेलेंगे. वह दौड़कर गया और साहबसे कहाकि ऐसा एक आदमीको दिखायाहै, वह लेसकताहै. और, ५० पेटी लेसकताहै. ज्यादा भी लेसकताहै. दाम क्याहै. साहब, साढ़ेतीन आना बोलाहै. साहबने सोचकर कहाकि दाम तो कमतीहै, पर आदेश देदियाकि दाम कमतीहै, फिर भी जाकर बेचो. तो नाथूरामजीने ५० पेटी उस भावमें जाकर बेचडालीं. वे पेटियाँ उसने कालूराम सेवारामको वेचदीं. साहब खुशहोगया. उधर वही साहब निक्कामलको तीन महीनेसे कहरहाथाकि कोई तरहसे बेचो, पर वह बेचनेका इंतजाम नहीं कररहाथा. तो साहबने ५० पेटियोंकी विक्रीहोतेही तार करदिया विलायतको, कि नया आदमी मिलाहै, बहुत अच्छाहै, ईमानदार लड़काहै. मेहनती लड़काहै. जवान लड़काहै, वह दलालीका काम अच्छाकरसकताहै. तो, वहाँसे स्वीकृति आगई. और इस तरह निक्कामलकी जगह वह आफिस नाथूरामजीके नाम करदीगई. अब आफिस मिलतेही नाथूरामजीने सारे सराफोंको चिट्ठी लिखदीकि जल्दी आओ, हमको आफिस मिलाहै. चिट्ठीके साथसाथ तार भी देदिया. तो वे सब आये और ऑफिसका काम अच्छाही किया. उधर निक्कामलजीका काम कमजोर पड़गया और उनके हाथसे वह ऑफिस सदाकेलिए चलागया.

"आपसे एक बात और कहूँ. सुनीहुई बातेंहैं ये मेरी. एकबार खेतड़ीके महाराज यहाँ आये. सबलोगोंने उनकी बहुत खातरीकी. नाथूरामजीने भी खातरीकी. तो उन्होंने झूला झूलनेकेलिए रस्सी चाहिए, ऐसी फरमाइशकी. तो नाथूरामजीने सूतकी, खूब मोटी रस्सी भेजी. औरोंने जरा हल्की भिजवाई. तो महाराजने कहाकि रईस तो यहहै !

"क्योंकि घरसे बाहर आकर, नाथूरामजीने मिरजापुरमें कालूराम सेवारामके बासेमें भोजन कियाथा, तो कलकत्तामें जब उनकेपास भी पैसाहोगया, तो उन्होंने एक बासा वैसाही खोलदिया, जिसमें कोई भी आकर भोजनकरे. जिसकेपास पैसाहो, तो दे, वरना जबतक काम न मिले, वह भोजन करतारहे. नाथूरामजीकी, इसतरह, मारवाड़ीसमाजके इतिहासमें बहुत कीर्तिहै.

"एक बात हमने यह भी सुनीहैकि नाथूरामजीको जयपुरकी कौंसिलमें एक सीट मिली. राजाने यह सीट दी. उनका सुनाम हुआ. उनकी सेठाई बढ़ीरही. मंडावामें भी उनकेहाथों अच्छाकाम हुआ."

३. राजस्थानमें रेलोंका आगमन, प्रवासकी दिशाओंके उद्घाटनके साथ, सराफ-वंशके सौभाग्यका सौम्य उद्घाटन

यदि हम यह मानकर चलतेहैंकि सन् १६०० के आसपास राजस्थानसे एकसालमें १०० व्यक्ति धन कमानेकेलिए बाहर-निकले, तो जिससाल नाथूरामजी सन् १८१७ के आसपास धन कमानेकेलिए राजस्थानसे बाहर भागनिकलेथे, उससमय सालमें प्रवासपर जानेवालोंकी औसत संख्या सालमें केवल १० ही रहीहोगी. और ये दस भी केवल एक अंचल या एक नगरके न होकर, बहुत दूरदूरके अपरिचित गाँवोंके निराश, खिन्न और भग्नहृदय व्यक्तिही हुआकरतेथे. पैदल या ऊँटोंपर चढ़कर कोई एक व्यक्ति पहले सफरकी जोखिम उठाताथा, बाहर परदेशमें दोपैसा किसतरह खानेकमानेको मिलताहै, उसका स्वानुभव करताथा, तब लौटकर वह एक या दो या दसको यह प्रेरणा देपाताथाकि उस अमुक शहरमें जानेसे दोपैसा कमानेका आसरा है; ऐसे भरोसेको लेकर घरसे निकला जासकताथा, तो इसरीतिसे एक शहरका जरूर पता चलजाताथा, पर यह कहकर नहीं चला जासकताथाकि किसी प्रवासकी दिशाका स्थायी उद्घाटनहोगयाहै.

आज १९८८ तक, लगभग १०० वर्षसे ऊपर होगये, बल्कि सवासौ सालहोगये भारतमें रेल चलेहुए ; अंग्रेजीसत्ताने उन्हीं दिशाओंमें रेल चलाई, जिन दिशाओंमें ब्रिटिशसत्ता अपनेदोनों पैर जमा चुकीथी. पर जिन दिशाओंमें उन्हें नई व्यापारिक मंडी बसानेकेलिए सहयोगीरूपमें भारतीय व्यापारियोंकी बड़ीसंख्या प्रवासकरसके, उधरभी उन्होंने रेल बैठादीथी. तो, रेल ब्रिटिश-सत्ता द्वारा बसाईहुई नईमंडियोंकी दिशाओंका उद्घाटनकरनेवाली विधायिका बनगई. तीसरा कारण इन रेलोंके यातायातकी पृष्ठभूमिमें एक और था—परिवारजनोंके और प्रवासीकेबीचकी यात्रा-दूरी आधेसालकी, पूरेसालकी या चौथाईसालकी न होकर, तीनसे सातदिनोंकी ही रहगई. नाथूरामजी पहलीबार पूरे सातमासमें मंडावासे कलकत्ता पहुँचेथे और कलकत्ताके ३० सालोंके धनार्जनके जीवनमें वे कठिनाईसे पांच या आठबारही मंडावा आये-गयेहोंगे. तो उनकी एक मुसाफरी ४-५ सालकी रहीथी.

नाथूरामजी सराफने अपने कबीलेके सराफ लोगोंको कलकत्ताके वस्त्र-व्यवसायमें उसी तरह बसादिया, जिसतरह, १८६० से पहले खत्री-पंजाबियोंने सूतापट्टीमें लगभग १०० से अधिक परिवारोंको लाकर बसादियाथा और उन्हें वस्त्रव्यवसायमें, कलकत्तासे देशके अन्यभागोंमें निर्यात होनेवाले वस्त्रकी चलानीके तानेबानेमें, अपना बड़ा परिवार बनाकर, जमा दियाथा. १८७०-८० तक सूतापट्टीमें तीनचौथाई पंजाबीथे, लेकिन धीरेधीरे उनके व्यावसायिक तेजस्वका सूर्य ढलनेलगाथा और ऐसी घड़ियोंमें बेनियनशिप-से लेकर थोक और रिटेल और चलानी और आढ़त सभी ठौरोंपर मारवाड़ीभाई, अपनी पगड़ीकेसाथ, सूतापट्टीमें खिलनेवाले नयेरंगके रूपमें दिखाई देनेलगेथे. कहां तो नाथूरामजी दो रुपये मासिकके रसोइए थे, कहां उन्होंने सारी सूतापट्टीमें अपने वर्चस्वकेसाथ मंडावाके लोगोंको और सराफोंको इसतरह खपादियाकि १६०० तक आधी सूतापट्टी मंडावाके सराफोंकी बाजनेलगी ! इसरीतिसे मंडावाके सराफोंके सौभाग्यका सौम्य उद्घाटन नाथूरामजीने १८६०-६५ के बीच करदियाथा.

भारतमें रेलने किसतरह अपना प्रसार मंथरगतिसे कियाहै, इसका एक सूक्ष्म तलपट हम यहाँ देदेतेहैं. सन् १६०० तक यह रेलमार्ग इसतरह भारतमें बढ़रहाथा, जैसेतो कोई दो नदियां अपनी शाखा-प्रशाखाओंको फैलातीहुई बम्बई व कलकत्तासे निकलीहों और अपना तरलप्रवाह इच्छित दिशाओंमें प्रसारितकरतेहुए, दिल्ली-नागपुर इन दो स्थानोंपर परस्परमें गुंथगईहों. पहले नदियां यातायातको नौकायन द्वारा सुगम बनातीथीं. इन रेलोंने अपनी दो समानान्तर लोह-पटरियों पर एक नया 'वाष्पचालित नौकायन' प्रस्तुतकरदियाथा ! लें, इन तिथियोंपर एक नजर डालें :

सन् १८५३ : बम्बईसे थानातक रेल.
,, १८६० : कलकत्तासे बनारस तकका रेलमार्ग संपूर्णहुआ.
,, १८६५ : बम्बईसे खंडवा तक रेल पूरीहुई और चलनेलगी.
,, १८६६ : दिल्लीमें जमनानदीका पुल पूराहुआ और इसतरह कलकत्ता-दिल्लीका रेलमार्ग संयुक्त होगया और खुलगया.
,, १८७० : अहमदाबादसे रेल अजमेरतक चलनेलगी. इधर अजमेरसे सांभरकी लाइन भी चलने लगी.
,, १८७५ : सांभरसे आगे नावांसे लोग उधर दिल्लीकेलिए, इधर बम्बईकेलिए गाड़ीपकड़ते.
,, १८७७ : सुजानगढ़, शेखावाटी प्रदेशके लोग मकराणातक ऊंटपर सफर करते, फिर मकराणासे रेलमें पहुंचते.
,, १८८० : कलकत्तासे दिल्लीका रेलमार्ग अबाधगति से हो, इसतरहकी व्यवस्था लागूहुई.
,, १८९६ : भिवानीमें रेल. अब लोग यहाँसे रेलमें बैठकर कलकत्ता जानेलगे.
,, १८९६-९८ : इससमयतक हावड़ा केवल तीन प्लेटफार्मवाला स्टेशन था, बड़ा स्टेशन स्यालदाह था. लिलुआमें दिल्लीसे आनेवालोंसे टिकट लियेजाते; उतरते वे या तो सियालदहपर, या हावड़ापर.
,, १९०२ : देवघर और जसीडीहकेबीच चारमीलकी लूप-लाइन खुली.

सन् १८९६ तक पिलानीसे भिवानी ६० मील दूरथा, इस सफरको ऊंटोंपर पार कियाजाता. मकराणासे जो ट्रेन आती,

वह आगरा आती, यहाँसे गाड़ीबदलकर कलकत्ताके लिए बैठते. बगड़से कुचामणा-नावांतक, रेलकेलिए, पहले ऊंटोंपर सफर करते, और यह मार्ग ऊंटोंपर बैठकर तीनदिनोंमें पूराकियाजाता. १८८० तक थर्डक्लास पैसेंजर दिल्लीसे कलकत्तातक ४०-४५ घंटेमें पहुंचती. रास्तेमें मुगलसराय, मुकामा, बक्सर आदिमें बारबार डिब्बे बदलकर गाड़ियोंमें बैठनापड़ता, तब कलकत्ता पहुंचाजाता.

सन् १८५३ : हावड़ा-कलकत्ताके बीच, हुगलीनदीपर, १५२८ फुटलम्बा पोनटन ब्रिज खोलागया और इसको पारकरनेके लिए टौलटैक्स लगता, एकबारके आनेजानेका दोपैसा.

सन् १८७० : इससमयतक सिरसातक के लोग ऊंटोंपर कानपुरतक आते, तब रेलमें बैठते. यह रेलयात्रा कानपुरसे कलकत्ताकी तरफ शुरूहोती.

हमने इस तिथि-तालिकामें वे ही तिथियां ली हैं, जो मंडावाके सराफ-वंशसे संबंधितरहीहैं. यदि ये रेलमार्ग जल्दी-जल्दी न खुलते तो यह संभावना एकदम नहींथी, कि कलकत्ताकी सूतापट्टीमें मंडावाके सराफ-वंशके लोग, पंजाबके खत्रीभाईयोंको हटाकर अपना दोतिहाई दखल करलेते. पर, हम इस तथ्यपर भी ध्यानदें कि जब सूतापट्टीमें मंडावाके अधिकतम सराफोंको नाथूरामजीने बैठा दिया, और जबकि मंडावासे कलकत्ताकी मुसाफरी एक-डेढ़ महीनेसे घटकर केवल ८ से १० दिनकी रहगई, नाथूरामजी कलकत्ता को अंतिम प्रणाम कर १८६८-७० के आस-पास वापस कलकत्तासे लौटगये. उससमय उनकी आयु लगभग ५३ सालकी होचुकीथी. रातदिनके कठोर शारीरिक श्रमकी वजहसे वे अब अशक्त ही नहीं होचलेथे, जल्दीही प्रौढ़ावस्थाको पारकर, वृद्ध भी होगयेथे. यह १८वीं-१९वीं सदीका एक अनचाहा अभिशाप थाकि हर व्यक्ति, और खासकर वह, जो परदेशकी जिन्दगी जीरहाहै, ५० सालकी उमरतक पहुंचते-पहुंचते पूरा वृद्ध होलेताथा.

जिससमय नाथूरामजी मंडावा लौट आये, उससमयतक मंडावाके सराफ-वंशमें लगभग सात परिवार-शाखाएं पल्लवित होचुकीथीं और उनमें स्त्री-बच्चोंको मिलाकर बीस-तीस जनोंका कुनबा बढ़चलाथा. इस कुनबेमें से लगभग चार-पाँच जनोंको वे कलकत्ताके कपड़ा-मार्केटमें दुकान करवाचुकेथे. स्वयं कपड़ा-मार्केटमें एक सेठ जैसी ऊँची आसन्दी भी स्थापित करचुकेथे कलकत्ताके बड़ाबाजारके वस्त्र-व्यवसायमें, जिसमें मारवाड़ी, खत्री, और गुजराती भाई हाथ बँटानेलगेथे, नाथूरामजी सूता-पट्टीमें इस वस्त्र-व्यवसायके सर्व-मान्य पितामहों में से एक बनचुकेथे. विलायतसे वस्त्रोंका इम्पोर्ट करनेवाली विदेशी कम्पनियोंके साहबोंमें उनकी एक साख और एक धाक और एक हैसीयत भी स्वीकारी जानेलगीथी. ऐसीही धनधनीली व्यापक प्रतिष्ठाके दायरेमें नाथूरामजीके द्वितीय पुत्र देवीबक्सजी सराफका आगमन कलकत्तामें हुआथा. जिससमय उनका पहला चरण कलकत्तामें पड़ा, उससमय उनकी आयु १३-१४ सालकी होचुकीथी. और जिससमय नाथूरामजी सक्रियजीवनसे अवकाशलेकर, वापस मंडावा लौटगये, उससमयतक देवीबक्सजीकी आयु २० वर्षकी होचुकीथी और वे कलकत्ताके उस वस्त्र-व्यवसाय को पूरी दक्षताके साथ, अपनी मुट्ठीमें थामचुकेथे, जिसेकि नाथूरामजी अपने वर्चस्वसे और अपने पुरुषार्थसे और अपने कर्मबलके पुण्यसे नामवर गद्दीपर प्रतिष्ठित करचुकेथे. यहाँपर हम नाथूरामजीके जीवनकी कतिपय तिथियोंपर एकदृष्टि पुनः डाललें :

सन् १८१७ : नाथूरामजीका जन्म मंडावामें फतेहचन्दजीके औरससे, तृतीयपुत्रके रूपमें.

सन् १८३० : नाथूरामजीके पिता फतेहचन्दजी और उनकी माताका देहान्त.

सन् १८३२-३३ : नाथूरामजीका पहलाविवाह. शायद इसविवाहकी सगाई फतेहचन्दजी अपनेहाथों रचाकर गयेथे.

सन् १८३५-३६ : नाथूरामजीकी पहली पत्नीका निधन, निःसंतानावस्थामें.

सन् १८३७ : नाथूरामजी २० बरसकी आयुमें मंडावाका त्याग असहायावस्थामें करतेहैं.

सन् १८४७ : इससमयतक नाथूरामजी कलकत्ता पहुँचलेतेहैं. थोड़ा धनकमाकर, मंडावा लौटतेहैं और अपना दूसराविवाह रचातेहैं. इससमय नाथूरामजीकी आयु मात्र ३० सालकी थी.

सन् १८४९ : इस दूसरीपत्नीने एक पुत्र बालमुकुन्दको जन्मदिया.

सन् १८५८-५९ : द्वितीय पत्नी दिवंगत होगई. नाथूरामजीने ४५ सालकी भरी जवानीमें अपना तीसराविवाह रचाया.

सन् १८६४-६५ : तीसरे विवाहसे, नाथूरामजीके द्वितीयपुत्र देवीबक्सका जन्म. इससमयतक नाथूरामजी एक धनाढ्य सेठ और समाज-कल्याणके मूर्धन्य रचनाकार भी होचुकेथे. राजस्थानके ४००-५०० मारवाड़ीपरिवारोंमें, जोकि कलकत्ता और उसके निकटवर्ती अंचलोंमें छोटी-बड़ी वस्त्रकी दुकानें या गद्दियाँ लेकर बैठचुकेथे, नाथूरामजीकी मान्यता विदेशी वस्त्र-व्यवसायके अर्थ-शास्त्रकी ऊंची व गहरी अन्तरयामिताके सिद्ध पुरुषोंमें होचुकीथी. जब १८६४-६५ में देवीबक्सजीका जन्महुआ मंडावामें, तो वे गर्भ मेंसे ही, अभिमन्युकी भाँति, इन सभी प्रोज्वल संस्कारोंके धनीबनकर जन्मेथे. यों नाथूरामजीने चारपुत्रोंको जन्मदिया, पर नाथू-रामजीकी सामाजिक यशस्विताकी परम्परा और अक्षयकीर्तिके संवाहक उत्तराधिकारी केवल द्वितीयपुत्र देवीबक्सजी ही हुए.

थानमलजीका मंडावामें आगमन एक सेठके रूपमें ही हुआथा. उससमय सेठाईका प्रधान दायित्व अपने ठिकाणेको और आसपासके ठिकाणोंको बियाजपर रुपया उधार देना, ठिकाणेके बिणज-व्यापारको फलाफूला बनाना और अपने गांवको आसपासके

व्यापारिक मार्गोंसे जोड़ेरखना होताथा. थानमलजीकी तीनपीढ़ियोंतक ऐसी ही सेठाई अपने प्रकृतरूपमें स्थिररहीथी. चौथीपीढ़ीमें नाथूरामजीने धनार्जनके लिए प्रवासमें निकलकर, एक दूसरी रीतिनीतिकी सेठाईका अध्याय प्रारंभकरनेका दुस्साहस करदिखायाथा. उन्होंने अपनेलिए ही ऐसी सेठाईकी दिशा नहीं खोजलीथी, उसका द्वार उन्होंने सारे मंडावेके लिए भी खुला रखछोड़ाथा. पर वे केवल मंडावाके लिए नहीं जन्मेथे, उन्होंने कलकत्ताकी सेठाईकी दिशा सारे राजस्थानके व्यापार-व्यवसाय-प्रिय महाजनों व वैश्योंके लिए भी उद्घाटित करदीथी !

महाजन वे थे, जो अपने गांवोंकी कोठियोंमें या हवेलियोंमें रहतेथे और उनके मुनीम बाहर गांवोंकी गद्दियोंपर उनके व्यवसायका संचालन कियाकरतेथे. वैश्य वे थे, जो छोटी-बड़ी मुसाफिरी करतेहुए, छोटी-बड़ी दलालीको आधार बनाकर, या सेठोंकी गद्दियोंपर नौकरी करतेहुए, मौका मिलनेपर अपना निजी लेवाबेचीका धंधाभी करगुजरतेथे. यह परिभाषा हम १९वींसदीके प्रारंभिक दशकोंकी देरहेहैं.

अवश्य नाथूरामजी राजस्थानके पहले महाभाग नहीं थे, जो १८५७ के गदरसे पहले कलकत्ता पहुंचगयेथे. १८२९ के आसपास, उनके मातापिताका देहान्तहोचुकाथा, ऐसा एक अनुमान स्वाभाविक रूपसे होताहै; उससमय उनकी आयु १२-१३ वर्षकी रहीहोगी. उनसे पहले कलकत्तामें मंडवाके निकट ही जो डूंडलोदहै, उसके महाजन जौहरीमलजी, रामदत्तजी और तुगनरामजी गोयेनका कलकत्ता पहुंचचुकेथे. १८३७ के आसपास, मंडावाके ही हरचंदरायजी ढांढनिया कलकत्ता जाचुकेथे और वहांसे वे फिर भागलपुर जा बसेथे. नहीं कहसकते, ये ढांढनिया पहले कलकत्ता गये या नाथूरामजी. पर, इसीके आसपास मंडावाके निकट जो 'रामगढ़ सेठोंका' है, उसके ताराचन्द धनश्यामदासने भी अपनी गद्दी इसी १८३७ के एकदो साल आगे-पीछे कलकत्तामें स्थापितकरलीथी. नाथूरामजी मिरजापुर होतेहुए कलकत्तागयेथे. पर, जब नाथूरामजी ५३-५४ वरसकी उमरमें कलकत्ताकी सेठाई पूरीतरह भोगकर वापस मंडावा आगये थे, तो वे कलकत्ताकी सारी आसक्ति भूलकर, मंडावामें स्थिर ग्रामीणी सेठाईका ही जीवन जीनेलगेथे. ऐसाही जीवन उनके पूर्वजोंने जीयाथा. कहसकतेहैं, उन्होंने नया जीवन शुरूकरतेहुए, अपने पूर्वजोंकी प्राचीन परम्पराका अधूरापौना सूत्र बड़ी मजबूतीसे दुबारा थामलियाथा. अब उनके लिए उनकी भाभीका अंकुश नहीं रहगयाथा. अब वे पूरे मंडावाके प्रतिपालक बनगयेथे. 'मंडावा नाथूरामजीका' कहलानेलगाथा. इसविषयमें श्रीबालकृष्णजी सराफने एक मनको लुभानेवाली बातकही, "आजसे कुछ बरसपहले जब आसपासके इलाकोंमें मंडावाकी चर्चा होतीथी, तो लोगबाग पहले जिज्ञासाकरतेहुए पूछाकरतेथेकि कौनसे मंडावा की बातकररहेहो. क्या 'नाथियाके मंडावा'की बात कररहेहो? इसतरह नाथूरामजीका सुनाम २०वींसदीके तीन दशकोंतक भी भूलाबिसराया नहीं बनाथा. यहांतक सुननेमें आयाहैकि मंडावा गांवकी करीबकरीब एकचौथाई जमीन नाथूरामजीके पास रहीथी."

मंडावामें सराफोंके मुनीम श्रीलादूरामजीने, प्रचलित जनश्रुतियोंको एक तरतीब देते हुए, नाथूरामजीने कलकत्तासे लौटकर किस रीतिका जीवन प्रारंभकिया, उसकी चर्चा इसप्रकार की, "नाथूरामजी अपनेजमानेके सेठरहे. मंडावामें वे अकेले ऐसे सेठरहेकि आसपासके गांवोंसे लोगबाग उनको देखनेकेलिए आयाकरतेथेकि वे कैसे आदमीहैं. पर वे धनाढ्य होकर भी, मोटा पहरतेथे, गोड़ोंतककी धोती बांधतेथे, क्योंकि उसजमानेका दरिद्र मनुष्य वस्त्राभावके कारण गोड़ेतककी धोतीही पहनताथा. तो वे अपनेगांवमें किसीकी भावनाको, उनकी धनाढ्यावस्थाके कारण ठेस न पहुंचजाये, इसनाते गोड़ेतककी धोतीही बांधते, वह भी मोटेकपड़ेकी. गायभैंस बहुत रखतेथे. गायभैंसकी सानी काटना, उन्हें दाना-चारा देना, तो अपने हाथसेही वह सेवा कियाकरतेथे. उनका दूध होता, तो नौकरलोग खड़ेहोकर उनका दही बिलोयाकरते; यह दही घड़ियोड़ीमें बिलोया जाता. नाथूरामजीकी सेठाणीका नियम थाकि उनके द्वारे कोई भी छाछ लेने आये, तो वह खाली हाथ न जाये. यह नियम सुबहसे शामतक पालित होताथा. यह इसलिए कि राजस्थानमें गरीब ही नहीं, संपन्न परिवारोंमें भी सुबह और शाम दोनों समय कढ़ी और राबड़ी बनानेका रिवाजरहाहै और इन दोनों व्यंजनोंमें मूल आधारपदार्थ छाछ रहतीहै."

श्रीबजरंगलालजी लाठने नाथूरामजीके बारेमें एक विशेषबात बताई. लाठजी भी मंडावाके ही सुनाम-पुत्र हैं. लाठजीने कहा, "नाथूरामजीने कलकत्तामें बहुत पैसा कमाया. मंडावा आकर, उन्होंने अपनी अचलसम्पत्ति बहुत बढ़ाई. खूब जमीन अपने कब्जेमें लेकर संचितकी. हवेली और नोहरे किये. पहले मंडावामें पांच पानेथे. वह घटतेघटते दो रहगये. उसमय जो दौर आया तो कहाजानेलगाथाकि मंडावामें दोपाने तो ठाकरोंके हैं और तीसरा पाना नाथूरामजीका है. नाथूरामजीने अपने धनमेंसे मंडावाके ठाकरोंको काफी धन ऋणमें दिया. वे अन्य ठिकाणोंको भी धन ऋणमें देनेलगेथे. उससमय ही यह कहावत-सी चलपड़ीथीकि मंडावा तो नाथूरामजीका है ! उनके पास इतनी जमीन-जायदाद होचुकीथी."

गाय चरानेवाले युवक नाथूरामजीने अपने योद्धा-शैलीके पुरुषार्थसे, कर्मबलसे और पूर्वजों द्वारा उत्तराधिकारमें दियेगये बुद्धिबलसे, केवल मंडावाके इतिहासमें नहीं, बल्कि सारे राजस्थानके इतिहासमें अपनेलिए एक यश सुरक्षितकिया. आजतो वे सर्व-देशीय मारवाड़ीसमाजके धन्यभाग एक ऐसे पूर्वज हैं, जिनका अक्षययश आगेकी सदियोंमें भी अमर रहेगा.

नाथूरामजी सराफका इतिवृत्त समाप्त करनेसे पहले यह अत्यंत आवश्यकहै, कि हम 'देशके इतिहासमें मारवाड़ीजातिका स्थान' नामक ग्रंथके लेखक श्रीबालचन्दजी मोदीने पृष्ठ ४४५से ४४६ तक 'नाथूरामजी सराफ' प्रकरणका जो उपसंहार लिखाहै, उसे

अविकलरूपसे उद्धृतकरदें : "नाथूरामजी अपनी धुनके बड़ेपक्केथे. उनमें आत्मविश्वास बहुतथा. जो धुन लगजाती, उसे सहजमें नहीं छोड़तेथे. अपने देश मंडावा जानेपर उन्हें देशी रजवाड़ों और ठिकानोंको रुपये उधार देनेकी धुन लगगई. देशी रजवाड़ोंमें सेठ कहेजानेमें उनको बड़ा आनन्द आताथा. नाथूरामजीका पहराव बड़ासादा था. वे घुटने तककी धोती, बदन में कमरी और पगड़ी पहनाकरतेथे. इसप्रकार की पोशाक ही उनके स्वभावका परिचयदेतीथी. वे झूठ बोलनेके बड़े विरोधी थे. पुनर्जन्म और परलोक मानतेथे. दान-धर्मको मनुष्यका कर्त्तव्य समझाकरतेथे. कतिपय निरर्थक बातोंपर उनका विश्वास नहीं था. उन्होंने कुएँ, धर्मशालाएँ, सड़कें तथा छात्रालय बनवानेमें हजारों रुपये लगाये. परन्तु मन्दिर बनाना वे पसन्द नहीं करतेथे. स्वभावके कुछ कड़ेथे, पर सत्यप्रिय थे, दान देना अपनी जीवित अवस्थामें ही अच्छा समझतेथे. मरनेकेबाद उस व्यक्तिके नामपर हजारों रुपये खर्च करना, इसकार्यको समाजके लिए वे बड़ा भारस्वरूप मानतेथे. कृषि तथा पशु-पालनसे उन्हें बड़ाप्रेम था. हजारों बीघा खेती कराते और गाय-सांडोंकी संख्या एकसौसे अधिक रखाकरते थे. रुईकी खेती कराके रुई पैदा करतेथे. उन्होंने रुई लोढ़नेके लिए मंडावेमें एक मशीन भी मंगाईथी और उसीसे पिनी रुईको अपनेघरमें कतवातेथे. कहाजाताहै, उनके घरमें २५-३० चर्खे हरसमय चलतेथे, जिन्हें घरकी औरतें और नौकरानियां चलाती थीं. जिससमय भारतमें स्वदेशी आन्दोलनका नामभी नहीं था, उस समय वे घरमें कते सूतका कपड़ा बनाकर व्यवहारमें लातेथे. धनशाली होनेपर भी उन्होंने कभी शाल-दुशालेका व्यवहार नहीं किया. उन्हें अपने घरमें कतेहुए सूतका मोटा खेस ही पसन्द था और हरसमय उसी खेसका व्यवहार करतेथे. वे कलकत्तेमें बहुतसमयतक अंग्रेजोंके संसर्गमें रहे, परन्तु अपना मोटा पहनाव कभी नहीं छोड़ा. सदा साफ-सुथरे रहतेथे. नाथूरामजी स्वयं पढ़ेलिखे नहीं थे. परन्तु उन्हें विद्यासे बड़ा प्रेम था. मंडावेमें पहले-पहल उन्होंने संस्कृत पाठशाला बनवाई, जिसमें एकसौ के लगभग विद्यार्थी विद्याध्ययन करते तथा भोजन पातेथे. मंडावे के पं० प्रेमसुखदासजी जोशीने, जोकि आज भी ब्राह्मणोंमें एक आदर्श व्यक्ति समझेजातेहैं, नाथूरामजीकी पाठशालामें ही शिक्षापाईथी. नाथूरामजीका रहन-सहन बड़ा सीधासादाथा. उन्हें देखकर उनके वैभवका अनुमान किसीको नहीं होताथा, पूछनेपर वे अपनेको सदा 'नाथिया' कहतेथे. कभी नाथूराम बोलकर अपना परिचय नहीं दिया. एक समयकी बातहै कि, कुछ महाजन दूरसे चलकर उनसे मिलने मंडावे आये. नाथूरामजी उससमय अपनी हवेलीके दरवाजेपर स्वाभाविकरीतिसे एक मोटा-सा लट्ठ लिए खड़ेथे. आयेहुए महाजनों ने उन्हें द्वारपाल समझ, उनसे पूछाकि 'सेठ नाथूरामजी कहां हैं ?' इसपर उन्होंने जवाबदियाकि, 'सेठ नाथूरामका तो मुझे पता नहीं; पर नाथिया तो यह खड़ा है.'

"हमने पहले बतलाया हैकि, नाथूरामजी को देशी रजवाड़ों और ठाकुरोंको रुपये कर्ज देना बहुतपसन्द था. खेतड़ीके राजा श्रीफतहसिंहजीको उन्होंने चार लाख रुपये कर्ज दियेथे, जोकि उन्होंने अपनी जिन्दगीमें वसूल नहीं* किये. उनकी मृत्युके बाद संवत् १९४८ में उनके पुत्र बाबू देवीबक्सजीके खेतड़ी नरेश राजाजी श्रीअजीतसिंहजीके पास उगाहीके लिए गये. यद्यपि खेतड़ी नरेशने उनकी बड़ी खातिरदारी की और चार महीनेतक उनको अपनेपास रखा ; परन्तु रुपयोंकेलिए टालमटोल ही होतारहा. नाथूरामजी जैसे अपनी धुनके पक्के व्यक्ति थे, वैसे ही उनके पुत्र देवीबक्सजी भी एक अजीब धुनके साबित हुए. रुपयों केलिए टालमटोल और खातिरीकी भरमार देखकर, देवीबक्सजी ने राजाकी ओरसे लिखेहुए सब कागजात भरपाईकरके राजाजीको सौंपदिये और एक लिखित नोटिस दिया, जिसमें लिखाथा कि, 'उस कर्ज के बाबत यदि आप कुछ भी देनाचाहतेहैं तो २४ घण्टे के अन्दर देदें, अन्यथा उस कर्जसे अपनेको मुक्तसमझें !' राजाजीने दूसरे दिन उन्हें बुलाया और कहा कि, कुछ दिनोंके लिये आप ठहरें. परन्तु देवीबक्सजी बड़ी विचित्र प्रकृतिके थे. वे अपनी बातको कैसे टालसकतेथे, उसीदिन चलदिये. कहा जाताहैकि उन रुपयोंकी पीछे उन्होंने कोई सुध नहीं ली.

"विक्रमी सं० १९२६ में जब नाथूरामजी के मुनीम गणेशदासजी मुसद्दी ने आफिसका काम अपनेनामपर करलिया तो नाथूरामजी प्रायः देशमें ही रहनेलगे. वे अपने जन्मस्थान मंडावेमें बहुतकम रहकर, ज्यादातर जयपुरमें रहतेथे. मिती पौष कृष्ण ३ संवत् १९४३ (सन् १८८६ में) तेजपालजी जैपुरियाके नोहरेमें उन्होंने ६९ वर्षकी अवस्थामें शरीरका त्याग जयपुरमें किया. पता लगताहैकि मृत्युके पूर्व उनके पुत्रोंने पूछाथाकि 'आपके शरीर छोड़नेकेबाद दान-धर्म कैसा कियाजाए ?' इसपर उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें जवाबदियाथाकि, दान-धर्म मनुष्यकी जीवित अवस्थामें करनाही उसकेलिए फलप्रदहोताहै. मैंने अपनी जीवित अवस्थामें जोकुछ कियाहै, वही यथेष्ठहै. मरनेकेबाद उस व्यक्तिके नामपर कुछकरना आडम्बर मात्रहै.

श्रीनाथूरामजी सराफका जीवनचरित्र मारवाड़ीसमाजके लिए बड़ा शिक्षाप्रद और मननकरने योग्यहै. यहीकारण हैकि हमने उसे विस्तारकेसाथ यहाँ अङ्कितकियाहै. जिससमय मारवाड़ीसमाजमें नाथूरामजी जैसे कुटुम्बपालक और जातिप्रेमी पैदाहुएथे, उसीसमय बंगाल जैसे सर्वथा भिन्न प्रकृतिवाले देशमें मारवाड़ीजातिके पैर जमे और उसकी उन्नतिहुईथी. आज मारवाड़ीसमाजमें कुशल व्यापारी और धनिकोंकी कमी नहींहै. लखपतियोंकी तो गणना ही क्या, बड़े-बड़े करोड़पती भी मौजूद हैं, परन्तु सेठ नाथूरामजी

* खेतड़ीके राजा फतहसिंहजी राजपूतानेमें पहले राजा थे, जिन्होंने अंग्रेजी भाषाका अध्ययन कियाथा और बड़े विद्याव्यसनीथे. श्रीनाथूरामजी ने शिक्षित और विद्याव्यसनी राजा समझकर ही चार लाख रुपये उन्हें ऋणमें देदियेथे.

जैसे कुटुम्बपालक और जातीयताके भावोंसे सम्पन्न व्यक्ति कितनेहैं ? आजसे प्रायः एक सौ वर्ष पूर्व केवल एक नाथूरामजीने साधारण धनिक बनकर सूतापट्टीमें मारवाड़ियोंका बोलबाला करदियाथा. क्या आजके अनेक धनशालीव्यक्ति अपनी मारवाड़ीजातिके व्यक्तियोंको यदि चाहें तो बेकारीके कष्टसे नहीं बचासकते ? पर लिखते खेदहोताहैकि, उससमय जैसा जातीयताका पवित्रभाव इससमयके लोगोंमें नहीं रहा. उससमय परोपकार और जातीयताकी भावना कामकरतीथी और इससमय व्यक्तिगत स्वार्थपरायणता और झूठा आडम्बर चलरहाहै. यदि आज मारवाड़ीसमाजके व्यक्तियोंमें नाथूरामजीके समान पवित्र भावना जाति के लिए होती, तो आज समाज में जो अनेक त्रुटियाँ दिखाई पड़रहीहैं तथा जातिके अनेक व्यक्ति अशिक्षित तथा बेकार मारे-मारे फिरतेहैं, वे एक भी नहीं दीखपड़ते और संसार समझताकि, भारतवर्षमें व्यापारकरनेवाली एक धनिक मारवाड़ीजाति है, जिसने अपने धनके बलसे अपने जातिके व्यक्तियोंकी बेकारी और शिक्षा सम्बन्धी कमीको दूरकरदियाहै. मारवाड़ीसमाजको, नाथूरामजीकी जीवनीपर ध्यानदेना चाहिये. समाजके लोगोंको सोचना चाहिएकि, मनुष्यका शरीर अमर नहीं है. लाखों-करोड़ों व्यक्ति बड़े-बड़े सम्पत्तिशाली होतेहैं और मरजातेहैं. उन्हें कोई भी याद नहीं करता. अनेक प्रपंच रचकर धन-सम्पत्ति जोड़ते हैं, पर सबकी सब यहींपर धरी रहजाती है. वे व्यक्ति धन्य हैं, जिन्होंने नाथूरामजी की तरह अपने धनका सदुपयोग समाज और देशकेलिए कियाहै यहीकारण हैकि, नाथूरामजी मरनेपर भी आज जीवित हैं. मारवाड़ीसमाजके सर्वसाधारण धनीमानी व्यक्ति नाथूरामजीके पवित्रभावोंको धारणकरसकें, तो मारवाड़ी-समाजकी बेकारी, स्वतंत्रशिक्षाका अभाव और जातीयताके भावोंकी कमी सहजमें दूरहोसकतीहै."

४. देवीबक्सजी सराफ : नाथूरामजी सराफका सामाजिक यशोवर्धन, १९२० तक, जटाजूट बेलकीतरह समृद्धहुआ

जिससमय नाथूरामजी ४७ वर्षकी आयुको प्राप्तहुए, उससमय उन्हें तीसरी पत्नीसे पहले पुत्रके रूपमें देवीबक्सजी प्राप्तहुए. यों ये नाथूरामजीके द्वितीय पुत्र थे. यदि हम देवीबक्सजी सराफके चित्रको देखें, तो हमें सहज भावसे नाथूरामजी सराफके चेहरेकी तेजस्विताका एक अंदाज होसकताहै. देवीबक्सजी अपनी मां पर गयेथे, इसलिए उनका स्वाभाविक कद सवा पांचफुटका ही रहगयाथा. पर नाथूरामजी ६ फुटसे अधिक लम्बे, कद्दावर, किन्तु यष्टितन थे. यष्टितनसे आशयहै, देहमें पतले, पर लम्बाईमें दृश्यमान !

देवीबक्सजीका जन्म अनुमानतः १८६४-६५ में हुआथा. जिससमय नाथूरामजी सन् १८८६ में दिवंगतहुए, उससमय नाथूरामजीकी आयु लगभग ६९ वर्षकी होचुकीथी. इसका अर्थ यह हैकि २२ वर्षकी आयुको प्राप्त देवीबक्सजीने अपने वरद् यश-लब्ध पिता-श्रीकी व्यावसायिक प्रतिष्ठाकी परम्परा, सामाजिक हितचिन्तनाकी परम्परा और युगकी भावधाराओंसे बहुत आगे बढ़कर, युगक्रांतिकी परम्पराका समग्र उत्तराधिकार अपनेहाथमें पुख्तारीतिसे करलियाथा. यहीकारणहै, कि जब नाथूरामजीका निधनहुआ, तो उस युगकी रूढ़परम्पराके अनुसार उन्होंने किसीप्रकारका छोटा-बड़ा श्राद्ध-भोजन आयोजित नहीं कियाथा. तब नये धनकमानेवाले सेठ अपने पूर्वजोंके निधनपर ५-५, १०-१० हजारलोगोंको न्योता देकर 'हेड़ा' कियाकरतेथे. श्राद्ध-भोजनसे अधिक, 'हेड़ा' वंशमें नये धनागमका 'ढोल-पीट प्रचार-नाटक' हुआकरताथा ! देवीबक्सजी सराफने अपने पिताश्रीके सामनेही आर्यसमाज की युगक्रांतिमें अपनेको दीक्षित करलियाथा. नाथूरामजी १८८६ में गये. इससे दोसाल पहलेही अजमेरमें महर्षि दयानंदजीका निर्वाण होचुकाथा. पर उनके जीवनकालमें ही १८८० के आसपाससे ही पंजाब, हरियाणा और राजस्थानमें आर्यसमाजका धुंआधार प्रचार शुरू होचुकाथा. यह तो निश्चित बातहै, कि देवीबक्सजीने नाथूरामजी द्वारा अर्जित अमितधनकी राशिमें कोई नया जोड़ नहीं जोड़ा, पर उन्होंने आर्यसमाजमें दीक्षितहोकर अपनी वर्चस्विताका कैन्वास बहुत विस्तीर्ण करलियाथा.

नाथूरामजी सराफकी कहानीतो रंगरंगीली जनश्रुतियोंमें सिमटचुकीहै, पर देवीबक्सजीकी कहानी सामाजिक वर्चस्विताके पुरानेपृष्ठोंमें बहुत विस्तीर्ण होकर मिलतीहै.

ऐसा प्रतीत होताहै, कि नाथूरामजी जब कलकत्तासे १८६९-७० के आसपास स्थायीरूपसे मंडवामें लौट आये, उसके बाद देवीबक्सजीने कलकत्ताके कपड़ाबाजारमें 'नाथूराम सराफ' नामसे एक गद्दी स्थापित करलीथी, क्योंकि बेनियनशिप तो नाथूरामजीके प्रधान दलालके नाम अंकित की जाचुकीथी. देवीबक्सजीने इसी फर्मपर कपड़ा-व्यवसायका रोजगार किया. यों अपने पिता द्वारा छोड़ेगये धन और जमीन-जायदादका भोग वे सहजभावसे कर ही रहेथे.

एकक्रमसे हम उन महत्वपूर्ण संस्मरणोंको लेतेहैं, जो हमें देवीबक्सजीके बारेमें प्राप्त हुएहैं. इन्हीं संस्मरणोंकी धारावाहिक कड़ियोंसे हमें देवीबक्सजीका एक क्रमबद्ध जीवनवृत्त सहजरीतिसे और सुगमतया सुलभहोजाताहै.

सबसे पहले हम सीतारामजी सेकसरियाका संस्मरण पढ़ें. मारवाड़ीसमाजने किस विलक्षणरीतिसे कलकत्तामें सामाजिक जागरणका एक कार्यक्रम साधा और उसमें देवीबक्सजी किसरीतिसे एक अगुआ रहे, यह बात इस संस्मरणमें उभर आतीहै :

"देवीबक्सजीकी चर्चा बहुतबड़ीहै. वे कट्टर आर्यसमाजी थे. उससमय आर्यसमाजी होना, समाजसे बहिष्कृत होनाथा. समाज

उसके साथ बिलकुल नहीं होताथा, कोई और आदमी उनका साथ नहीं देतेथे. उसकी निंदाकरतेथे. देवीबक्सजी इन बातोंकी परवाह कियेबिना आर्यसमाजके सारे सिद्धान्तोंका कट्टरतासे पालनकरतेथे. जयनारायणजी कट्टर आर्यसमाजी नहीं थे. वे होशियारथे. वे अपने विचारोंको दूसरोंपर लादते नहीं थे. वे बड़ी पंचायतके एक पंच थे. जबतक जयनारायणजी पोद्दार नहीं पहुँचतेथे, पंचायत नहीं होतीथी. देवीबक्सजी अपनेविचारोंपर कट्टरताके साथ रहतेथे. न देवीबक्सजीको कोई बुलाताथा, न वे कहीं जातेथे. उनका किसी से संबंध नहीं होताथा. वे अपनेहीमें व्यस्तरहतेथे.

"जयनारायणजी पोद्दार बहुत होशियार आदमीथे. वे अपना भी काम निकालतेथे और इनको भी राजी रखतेथे. यों मारवाड़ीसमाजमें बहुत आन्दोलन चले. तो एक नया आन्दोलन चला. चार-पांच सामाजिक आन्दोलनोंका तो इतिहासहै. सब मेरे सामने चले. एक आन्दोलन चला : आर्यसमाज संगठन का आन्दोलन. अब और तो कोई आर्यसमाजी था ही नहीं, दो-चार आदमी बस थे—जयनारायणजी पोद्दार, देवीबक्सजी सराफ आदि. यह आन्दोलन १६०८ में हुआ था. तो, सनातनधर्मियोंका जोर था और आर्यसमाजी अधिक थे नहीं. तो, सनातनधर्मियोंने उन आर्यसमाजी लोगोंको चिट्ठी देदी कि जो चिट्ठी देदें तो वे सनातनधर्मी, जो न दें, वे आर्यसमाजी. आर्यसमाजी होना याने जातबाहर होना. तो सबने चिट्ठी देदी. जयनारायणजी पोद्दारने भी चिट्ठी देदी. जब जयनारायणजीने चिट्ठी देदी, तो हमलोगोंको बहुत तकलीफहुई, कि ये क्यों पंचायतियोंके आगे झुकगये ? हम लोग उनसे मिले. वे बोलेकि थे समझा कोनी. वे चिट्ठी देनेसे राजी होगया. हम तो अपने जो काम करतेहैं, सो करतेहीहैं, करते-रहेंगे, पर चिट्ठीदेनेसे वे राजीहोगये !

"हमारे बीच राधामोहनजी गोकुल एक आदमीथे. उनका बहुत नाम हुआहै. बहुत क्रांतिकारी थे, हम लोगोंके गुरु जैसेथे. वे हमलोगोंको पढ़ायाकरतेथे. वे कानपुरकी तरफके थे. सनातनियोंका पत्र निकलताथा 'सनातनधर्म !' हमलोगोंका, जिसे हमलोग अपना मानतेथे, वह राधामोहनजीके हाथसे निकलताथा : 'सत्य सनातन'. तो गोकुलजीने इसी 'सत्य सनातन' में लिखाकि जयनारायणजी पोद्दारने पंचायतवालोंको एक झूंझुना देदिया ! वह जो चिट्ठी देदी उसे 'झूंझुना' बतलाया. उस चिट्ठीको पढ़ो, बांचो, तो भी वह समंदर नहींहै. वे सनातनी तो है नहीं, बाकी जयनारायणजी तो आर्यसमाजीहैं. उस चिट्ठीको जो पढ़ताहै, उसे पढ़कर वह झूंझुनेकी तरह खेलता है ! इसतरह पंचायतवालोंकी खिल्ली उड़ाई. तो, इस प्रकारका समाज था उससमय. इसीतरह तब चलताथा.

"देवीबक्सजी कट्टर आर्यसमाजीथे. अपनी बातको जो कहतेथे, उसको छोड़तेनहींथे. उसबातकेलिए जो तकलीफ आतीथी, उसको सहतेथे. बहादुर आदमीथे. परवाह नहीं करतेथे. चाहे कितनीही बड़ी विपत्ति सामने आवे, वे बिलकुल डरतेही नहीं थे.

"एक प्रसंग कहूं आपसे. लक्ष्मीनारायणजी खेमाणी उससमय लड़का ही था. उससमय मुझसे बड़े थे वो. उनको खूब जानताहूँ, वे दोस्त आदमीथे और बड़ेथे. अभी १६-२० दिनहुए, दिल्लीमें अपने लड़केके पास दिल्लीरहतेथे, उनकी मृत्यु हुईहै. वे लक्ष्मीनारायणजी भी आर्यसमाजीथे. देवीबक्सजीका बहुत प्रभाव था उनपर. वे देवीबक्सजीको खूब मानतेथे. उन लक्ष्मीनारायणजी के एक विधवा बहनथी. तो देवीबक्सजीने कहाकि आप इसे जालंधर महाविद्यालयमें भरती कर दीजिए. वहाँ बहुत अच्छी शिक्षा होतीहै. तो वे जाकर उसको भरती करा आये. उससमय उस विद्यालयमें तो भेजना दूरकी बात, यहाँ किसी विद्यालयमें भी कन्याओंको भेजना बड़ा मुश्किल माना जाताथा. तो वहाँ करा आये. तो लक्ष्मीनारायणजीकी मांने, उस लड़कीकी मांने पंचायतमें शिकायतकी. तो पंचायतवाले बहुत नाराजहोगये. उससमय दूधनाथ महादेव सबसे बड़ा सार्वजनिक स्थान मानाजाताथा. तो उन पंचायतवालोंने दूधनाथ महादेवपर धरनादिया. मांने भी, कि लड़की फिरत आवे तब मैं उठूँ यहाँसे. लोगबाग जालंधर जाकर उस लड़कीको लाये. लक्ष्मीनारायणपर मुकदमा करवायाकि ये उसे जबरदस्ती वहाँ लेकर गये. जब लक्ष्मीनारायणजी पर मुकदमाहुआ, तो जवाबी कार्यवाही देवीबक्सजीने की. कोर्टमें सारी कार्यवाहीका सामनाकिया. तो, ऐसेऐसे मामलेहुए ! पर सभी मामलोंमें देवीबक्सजीने बड़ी हिम्मतसे कामलिया. जब लक्ष्मीनारायणजी का मामला चला कोर्टमें, उससमय बहुत बड़ी भीड़ इकट्ठी होतीथी कोर्टमें. देवीप्रसादजी अकेले होतेथे. उधर पंचायतकी तरफसे सारा समाज होताथा. उसमामलेको लड़नेकेलिए समाजमें चंदाहुआ, जिसमें शिवप्रसादजी झूँझुनूंवालाने चंदा नहीं दिया. अगर शिवप्रसादजी या हरिरामजी चंदा न दें, तो चंदा आगे नहीं बढ़े. वो ही नामी थे. इसीतरह ताराचन्द घनश्यामदासका स्थान था. वह दें ही कैसे, क्योंकि वहाँ प्रधान मुनीम जयनारायणजी थे और वे आर्य-समाजी थे. हरिरामजीने कहाकि हम देंगे, पर पहले नहीं ; पहले वो (याने जयनारायणजी) दें तो देंगे. इसतरह मुख्य चंदा नहीं हुआ. उधर दोतीन पेशियाँ हुईं. सिर्फ कुछ लोगोंने चंदादिया. बाकी दोतीन पेशियोंकेबाद वे छूटगये. ऐसेऐसे मामले होतेथे उनदिनों.

"देवीबक्सजीका शरीर ३० बरससे ज्यादाहोगये, १६३४-३५ के बाद, तब नहीं रहाथा. वे मंडावामेंही रहे. उनकी ठाकुरोंसे जब मुठभेड़ हुई, उसीकेबाद उनकी जल्दी मृत्युहोगई. अक्खड़ आदमी थे और ठाठके आदमीथे. ठाकुरोंने उनकी इज्जत खराबकरनेकी चेष्टाकी, उससे देवीबक्सजीको चोट बहुत लगी. उनका नाम था बहुत बड़ा, उनकी इज्जत दूरदूरतक थी. तो उनकी इज्जत बिगड़जाए, इससे वे दुखीहुए. वे बाहर कम निकले और जल्दी चले भी गए. यों गये ७० सालकी उमरमें."

*** *** ***

देवीबक्सजीने कलकत्ताके व्यावसायिक और सामाजिक मंचपर अपनी एक प्रतिष्ठा स्थिरकीथी. १९०१ के आसपास, कलकत्ताके बड़ाबाजार अंचलमें 'वैश्य-मित्र-सभा' की स्थापनाहुईथी. यह गरम खून और होशहवासवाले मारवाड़ी और हिन्दीभाषी अन्यसमाजोंके युवकोंकी एक सक्रिय संस्था थी. देवीबक्सजीकी आयु इससमय ३६ बरसकी थी, पर वे २० युवकोंके एक युवकथे. खासबात यहहैकि इस संस्थामें उससमयके सभी बुद्धि-विचक्षण युवक शामिलहुएथे. उनमेंसे देवीबक्सजी एकप्रकारसे अगुआ दलमें से थे. इसी संस्थाका फिर एक दूसरा क्रमविकास हुआ. कलकत्ताके बड़ाबाजारके वस्त्र-व्यवसाइयोंने 'मर्चेंट्स चेम्बर ऑफ कॉमर्स' नामसे प्रतिष्ठान संगठितकिया. उससमय देवीबक्सजी सराफ इसमें कोशाध्यक्ष-पदपर निर्वाचितहुए. उनकी अन्य सामाजिक गतिविधियोंके बारेमें जो जनश्रुतियाँ मिलतीहैं, वे बहुत अधूरीहैं. बतायाजाताहैकि वे उस युगके उत्तम प्रभावशाली भाषणकर्ताओंमें से एक थे. अग्रणी भी समझेजातेथे. कलकत्ताके मारवाड़ीसमाजमें उससमय मुश्किलसे ३-४ भाषणकर्त्ता भी तैयार नहीं होपायेथे. इसलिए देवीबक्सजीका स्थान समादृत हुआथा.

अब हम श्रीप्रभुदयालजी हिम्मतसिंहकाके संस्मरण हाथमें लें. इनमें देवीबक्सजीकी १९१३ से १९३० तककी कतिपय ऐसी स्मृतियाँ सामने उभरतीहैं, जिनमें देवीबक्सजीका जीवटभरा व्यक्तित्व बहुत ऊपर उभरकर आताहै. हिम्मतसिंहकाजीने कहा : "देवीबक्सजीसे मेरा संबंध सामाजिक क्षेत्रमें १९१३ के आसपास हुआ. सामाजिक विषयोंमें उनका विचार बहुत उग्रथा. वे समाजकी हर बातमें, हरेक चीजमें सबसे आगे रहतेथे. अपने सिद्धांतके बड़े पक्केथे. एकतरहसे वे आर्यसमाजी थे. और उससमयके जितने भी गण्यमान्य व्यक्ति मारवाड़ीसमाजमें थे और जिनको 'चपकनिया' भी कहाजाताथा, और जो अपने आपको सनातनी भी कहतेथे, वे सभी उनसे बहुत नाराज रहतेथे. उनसे मेरा खासकाम १९१४ से पड़ना शुरूहुआ. जब मैं 'रोडा आर्म्ज केस' में पकड़ागया, तब वे खुद चलकर मेरेपास आये. यों मेरेसे उनका कोई खास परिचय नहींथा, पर पकड़े जानेकेबाद वे निर्भीकभावसे मेरेपास आये. उनकेसाथ लक्ष्मीनारायणजी मुरोदिया भी आये. जोड़ाकोठीमें उससमय मैं रहताथा. उन दोनोंने कहा कि सरकारकीतरफसे जमानत मांगी जायेगी या कोई और भी कामहोगा, तो वे हरतरहसे तैयारहैं. विशेषरूपसे देवीबक्सजीका बारबार यही कहनाथाकि मैं किसीतरह न घबड़ाऊँ. उनकी बातोंसे मेरेमनमें बहुत हिम्मत आई. जब मुकदमा आदि कार्यवाही पूरीतरह से चली भी न थी, वे मुझसे मिलतेरहे और किसीतरहकी सहायता, चाहे वह आर्थिक ही क्यों न हो, वे देनेको सदा तैयार रहतेथे. पैरवी करनेको तो वे सदा तैयार रहतेथे. समाजके और लोग हमलोगोंकी गिरफ्तारीसे इतने डरगयेथेकि बहुतसे लोगोंने तो मेरेसे बात करना भी छोड़दियाथा. उससमय उन्होंने जो हिम्मत दिखाई, वह एक प्रशंसनीय बातथी.

"उसकेबाद तो उनसे बहुत काम पड़तारहा. समाजमें वे कभी दबे नहीं और बराबर अपने विचारको व्यक्त करतेरहे. उनका मकान चित्तरंजन एवेन्यूमें शायद १६ नं० काहै. वहाँपर बहुतसे 'राजियेके दोहे' लिखेहुए रखेथे. राजियेके दोहोंमें जैसा खरा-पैना विचार रहताहै, कुछ उससे मिलतेजुलते उनके विचारथे. जबतक वे इस दुनियामें रहे, अपने सिद्धांतपर अटलरहे. किसीसे दबनेका काम नहीं. बहुत अच्छीतरहसे वे अपना काम करतेरहे.

"मैं एकबार उनकेसाथ राजस्थान भी गयाथा, जब वे मुझे मंडावा लेगयेथे. तब वे अपने खेतसे बाजरेके भुट्टे और मतीरे लाये. निकालनिकाल कर उन्होंने हम लोगोंको खानेकेलिये दिया. उससमय हम लोग करीब ९ बजे बैठेथे और यह खाना करीबकरीब डेढ़ बजेतक चलतारहा. उस दिन और कुछ खानेका काम नहीं पड़ा. सिकेहुए सिट्टे और मतीरेही खातेरहे."

"देवीबक्सजी क्योंकि अपने सिद्धांतके पक्केरहे, इसलिए समाजपर उनका काफी असररहा. मैं तो उनको बहुत ज्यादा आदरकी दृष्टिसे देखाकरताथा. उनकेसाथ बादमें मेरा बहुत काम नहीं पड़ताथा, पर वे हर काममें मददकरनेकेलिए तैयार रहते."

श्रीबजरंगलालजी लाठ मंडावाके एक यश-लब्ध सामाजिक सुभद्र हैं. आपने देवीबक्सजीके बारेमें अपनी स्मृतियोंको तरोताजाकरतेहुए कहा, "देवीबक्सजी हमारेसमाजमें एक अद्वितीय पुरुष हुए. सारे शेखावाटीमें उनकी शानका दुबला-पतला, विचारोंका कट्टर आर्यसमाजी फिर दूजा न हुआ. आर्यसमाजके हिसाबसे ब्राह्मण-भोजन नहीं करानाहै, तो नहीं ही करानाहै, ऐसे दृढ़प्रतिज्ञ, श्राद्ध-भोजन भी नहीं करातेथे ; उनके घरमें कोई श्राद्ध-भोजन करानेकी तैयारी दबेछिपे करताथा, तो वे स्वयं उस-भोजनको करने बैठजाते और कहतेकि ब्राह्मणसे चोखो मैं हूं. भागीरथजी कानोड़िया, सीतारामजी सेकसरिया और अन्य सुधारक-दलके लोग उनके पास आतेजातेरहेथे. यहाँ भी उनकी गतिविधि टूटटूटकर नहीं रही, वे उन्हें बनाकर रखाकरतेथे. हाँ, मंडावासे उनका सम्पर्क ज्यादा ही रहा. कलकत्तामें उनका एक काम गायोंको लेकर खूबहुआ. दौलतरामजी चोखानी चपकनिया, देवीबक्सजी आर्य-समाजी, इसलिए दोनों तिया-छक्का फैलातेरहे. दोनों दो मतके, परस्परमें विरोधीमतके. पर गायोंके विषयमें दोनों एकमतके. सबसे आग्रहकरतेरहे, कि बिल्ली लगाओ और उसका सही उपयोगकरो. एकबार मैं मंडावासे कलकत्ता आरहाथा. तो उनसे उनके नोहरेपर मिलनेगया. बैठे सिट्टा चाबरहेथे. अंगरखी पहनरखीथी. सिरपर पगड़ी धाररखीथी. मेरे साथके भाईने मेरापरिचय कराया. मैंने कहाकि मेरी गाय पिंजरापोलमें देनीहै. उनके सहयोगसे मंडावामें पिंजरापोल होगईथी. तो बोलेकि ऐंकी जान लेनीपड़सी. गायोंके प्रति उनके मनमें ऐसा ममत्व थाकि जानो, उनकी अपनी जान उस गायमें रमणकरतीहै !"

श्रीगुरुदेवजी खेमाणीकी अश्रु-विगलित वाणी, देवीबक्सजी सराफकी दुष्कर तेजस्विताके संस्मरण

पूरे दस वर्षके प्रयासके उपरान्त, हमें १९८६ में २३ सितम्बरको श्रीगुरुदेवजी खेमाणीसे एक साक्षात्कारकरनेका सुयोग प्राप्तहुआ. यह दस वर्षकी अवधि इसलिए निकलगई, कि खेमाणीजी प्रायः कलकत्तासे बाहर रहतेहैं. जब वे कलकत्ता आयें तो हम अपनी यात्राओंमें बाहर रहें.

श्रीखेमाणीजीका एक लम्बा इतिहास कलकत्ताके सामाजिक जीवनमें रहाहै. सुस्पष्ट चिन्तन, सात्विक मानवीयताके परम अनुकरणीय सिद्धान्तोंका प्रतिपालन दीर्घसमयसे अपनेजीवनमें करतेरहेहैं. पिताश्रीके कालसे परिवारमें आर्यसमाजकी रीतिनीतिका जीवनदर्शन व्यवहारमें रहाहै. इसलिए यह स्वाभाविक थाकि देवीबक्सजीके संरक्षणमें, समाजसेवाकी आदर्शवादिताके प्राथमिक पाठ कंठस्थ करते. जिससमय गुरुदेवजीका जन्म हुआथा, उससमय देवीबक्सजी सराफकी आयु ३५ बरसकी होचुकीथी. जब गुरुदेवजी २९ बरसके हुए, तो उससमयतक उनके पिता और पितामहका स्वर्गवास होचुकाथा. देवीबक्सजीने गांवके बाहर, अपने नोहरेमें एक बोर्डिंगहाऊस खोलरखाथा, जहाँपर बाहरगाँवके छात्र उसमें रहतेहुए, मंडावाकी शिक्षणसंस्थामें विद्यालाभ कियाकरतेथे. गुरुदेवजी भी इसी बोर्डिंगहाऊसमें जाकर देवीबक्सजीकी देखरेखमें खेलाकरतेथे, और विद्यालाभ करतेथे. बादमें जबतक, देवीबक्सजीका शरीर १९३५ तकरहा, गुरुदेवजी उनके वरद् हस्तके नीचे समाजसेवाके पाठ ग्रहणकरतेरहे. सक्रियजीवनमें उनके आदेशानुसार समाजसेवा करनेभी लगेथे. इसलिए जैसेही, हमने यह नम्र आग्रहकिया, कि हम आपका कुछ समय लेने आयेहैं, ताकि आप हमें देवीबक्सजी सराफके संस्मरण सुनायें, क्योंकि इससमय केवल आप ही एक ऐसे सज्जन विद्यमानहैं, जिनकेपास देवीबक्सजीसे संबंधित प्रमाणित सामग्री विद्यमानहै, यह सुननाथा, कि गुरुदेवजीकी वाणी अवरुद्ध होगई, नेत्र अश्रुविगलित होगये. आपने कहाकि वे एक महानात्माथे. मैंने समाजसेवाका जो भी थोड़ाबहुत कामकियाहै, सब उनकी ही कृपाका फलथा. पर इतनाकहकर आप मौन होगये और प्रकृतिस्थ होनेमें आपको कुछसमय लगा.

कलकत्तामें यह पहला अवसर थाकि हमने किसी ज्येष्ठायु सज्जनको अपने अग्रजको गुरु भावसे स्मरणकरतेहुए और उनकी पवित्रस्मृतिको अपनी अश्रु-अंजलि देतेहुए देखा !

*** *** ***

श्रीगुरुदेवजी खेमाणीका वंश मंडावामें टांईसे उठकर आयाहै. यह टांई बिसाऊकी दिशामें सातमीलकी दूरीपर है. मंडावाकी स्थापना १७६० के आसपास हुईथी. श्रीहेमचन्दजी गुरुदेवजीके आदि पूर्वज थे, और इनका जन्म १७४४ के आसपास हुआथा. इनके दोपुत्र हुए, जिनमें खेमचन्दजी ज्येष्ठ थे. खेमचन्दजीके पुत्र-पौत्रादि ही 'खेमाणी' कहलाये. खेमचन्दजी का जन्म लगभग १७७४ के आसपासहुआ. ये दोपुत्रोंके पिताहुए. ज्येष्ठपुत्र भूधरमलजीका जन्म सन् १८०४ में हुआ, और छोटे पुत्र गोपालराम जीका जन्म सन् १८१० के आसपास हुआ. गोपालरामजीके पौत्रादि बादमें डिब्रूगढ़ की दिशा जाकर बसगयेथे. भूधरमलजी दोपुत्रोंके पिताहुए, जिनमें ज्येष्ठपुत्र कनीरामजीका जन्म सन् १८२९के आसपासहुआ. कनीरामजी सातपुत्रोंके पिताहुए, जिनमें शिवदत्तरायजी मंझलेपुत्रथे और इनका जन्म सन् १८५४ के आसपासहुआ. इन्होंने ७५ बरसकी आयुपाई और इनका निधन मंडावामें ही १९२९ में हुआ. ये शिवदत्तरायजी महणसरमें बियाहेथे और इनकी धर्मपत्नीका नाम श्योबाईथा. शिवदत्तरायजीके एक ही पुत्र हुए श्रीनिवासजी, जिनका जन्म सन् १८८५ में हुआथा. इनका बियाह मंडावामें ही, मुत्सद्दीपरिवारमें दाखीदेवीसे हुआथा. इनके तीनपुत्र हुए : १. श्रीगुरुदेवजी, जन्म सन् १९१०, २. सत्यदेवजी और ३. गोविन्ददेवजी. श्री श्रीनिवासजीने ही अपने परिवारमें आर्यसमाजका महामंत्र ग्रहणकियाथा. ये जीवनपर्यन्त हवन आदि करतेरहे. वेद-उपनिषद् आदिका पारायण भी कियाकरते थे. श्रीनिवासजीने थोड़ीही आयु पाई और केवल ४० वर्षकी आयुमें १९२५ में चलेगये. उसके बादसे, श्रीदेवीबक्सजी सराफने ही पितृवत्, गुरुदेवजी खेमाणीका संरक्षण कियाथा.

*** *** ***

तो हम वापस देवीबक्सजी सराफ विषयक संस्मरणोंपर लौटें.

श्रीगुरुदेवजी खेमाणीने कहाकि देवीबक्सजी केवल मंडावाके स्वनामधन्य पुरुष नहीं थे. समग्र शेखावाटीमें उनका सुनाम था और प्रताड़ित व पीड़ित भाईलोग उनसे रायलेने और समयसमयपर उनको मार्ग दिखानेकेलिए उनसे आग्रह करने आतेही रहतेथे. शेखावाटी विभिन्न ठाकुरोंके शासन-क्षेत्रोंमें विभाजित था. ये राजपूत ठाकुरलोग स्वयंभू शासक थे और प्रायः इनका शब्द ही कानून मानाजाताथा. इन ठाकुरोंके गुमाश्ते प्रायः अत्यंत उद्दंड और निरंकुश अत्याचारी रहतेथे और दीन हो या त्रस्तहो या संभ्रान्त हो, सभीपर अपनी दुष्टताका प्रहार करतेरहतेथे. प्रभुकृपासे इस व्यापक अन्यायका प्रतिरोध करनेकेलिए ही देवीबक्सजीका सक्षम जन्म हुआ था. हमने तो उनके जीवनके उत्तरार्द्ध, १९२५ से १९३५ तक को ही देखाहै, इसलिए इसी जमानेके ९-१० घटनाक्रम देसकतेहैं. पर इन दृष्टांतोंसे ही अनुभव किया जासकताहै कि देवीबक्सजीने अपने जीवनके ७० सालोंमेंसे कमसेकम ४० वर्षतो अन्यायका प्रतिकार व प्रतिरोधकरनेमें, निराश्रित जनोंको लोकसमाजका न्यायमिले, इसकेलिए निरन्तर संघर्षकरनेमें, आन्दोलन

करनेमें, अनुत्तरदायी सामंतगण जनताके प्रति उत्तरदायी रहें और उनपर शासन सम्यक्रीतिसे करें, इस विषयका जनजागरणकरनेमें ही खपादियेथे. कैसा प्रचण्ड स्वभाव था उनका, कि जीवनकी आखरी घड़ियोंतक, इसीप्रकारके जनसेवा-प्रतिनिधित्वमें उन्होंने किसी प्रकारका शैथिल्य नहीं आनेदियाथा.

धनार्जनकरनेवाले मारवाड़ीलोगोंपर, अपनेही पैतृक ग्रामोंमें आनेके समय, जकात चुकानेका असह्य दण्ड

आसक ठाकुरलोग शेखावाटीमें येनकेनप्रकारेण अपनी प्रजासे 'निराधार धन' की वसूली करतेरहनेके उपाय खोजतेरहतेथे, कारणोंके बहाने तलाश करतेरहतेथे. यही १९३३-३४ की बात होगी. शायद सबसेपहले बीकानेरके महाराजा गंगासिंहजीने इसप्रकारका कुचक्री कानून अपनी रियासतमें बनाया, जिसका प्रतिरोधकरनेकेलिए सारे भारतमें असंतोषभरा आन्दोलन उठखड़ा हुआथा. उनका अनुगमनकरतेहुए, शेखावाटीके ठाकुरोंने भी ऐसीही आज्ञा प्रचारितकरदी, कि जो लोग बाहर गांवोंसे या परदेशसे धनकमाकर, अपनी पैतृक हवेलियोंको लौटें और अपनेसाथ समानलायें, उसपर उनको जकात देनीहोगी. स्वभावतः इस पर रोष जाग्रतहोना चाहिएथा. कलकत्ता-बम्बई आदि नगरोंमें इस विषयपर विचारकरनेकेलिए जनसभाएंहुई. पर शेखावाटीमें सभी गांवोंके लोगोंने देवीबक्सजीको अपना प्रतिनिधि चुना और उन्हें यह भारदियाकि वे इस सरकारी आज्ञाको रद्दकरवानेमें मददकरें. देवीबक्सजी स्वतः ही इस झाड़शाही आदेशसे क्षुब्ध होचुकेथे. इससमय झूंझुनूंमें नाजिमका दफ्तर था. सीकर आदि ठिकाणोंमें चीफ पौलीटिकल अफसर मिस्टर कैरोल थे. कैरोलको सारे भारतसे यह समाचार मिलही चुकेथेकि एक असन्तोष सार्वजनिक रूपसे उभड़ रहाहै. इधर देवीबक्सजीने उनसे भेंटकी. उनका आदेशहुआकि आप एक प्रतिनिधि-मंडल इसविषयपर अपने विचार रखनेकेलिए लायें. उधर उन्होंने सारे ठाकुरोंकी एक मीटिंग बुलाई और यह तयहुआ कि उस मीटिंगके दिन जनताका प्रतिनिधि-मंडल ४.३० बजे शामको झूंझनूंमें उनसे आकर मिले. देवीबक्सजी दस-बारह गांवोंके गण्यमान्य सेठसाहूकारोंको अपनेसाथ लेकर झूंझनूं ४.३० से पहले ही पहुँचगये. एकभवनमें ऊपरके कक्षमें ठाकुरलोगोंकी मीटिंग कैरोल साहबकी अध्यक्षतामें होरहीथी. देवीबक्सजीने ऊपर संदेशा भिजवायाकि हम लोग आगयेहैं. ऊपरसे समाचार आयाकि आपलोग दस मिनट ठहरें. पर ये दस मिनट तो 'झाड़शाही' दसमिनट थे, जिसका अर्थ एक घंटासे लेकर दस घंटेतक मानलिया जासकताथा !

देवीबक्सजीने कहाकि ठीकहै, हम दस मिनट रुकेंगे. यह बात इसलिए कही, कि उन्हें यह कतई रुचिकर नहीं थाकि उन्हें साढ़े चारका समय देकर, फिर और दसमिनट रुकनेको कहा जाए. जब दस मिनट भी होगये, तो उन्होंने अपनेसाथियोंसे कहाकि चलो. पर साथियोंने कहाकि जब आयेहैं, और गंभीर मामलाहै, तो पांच मिनट और रुकलें. देवीबक्सजी अपने साथियोंकी यह बात अनिच्छापूर्वक मानगये. पर पांचमिनट भी बीतलिये, लेकिन ऊपरसे उन्हें नहीं बुलायागया. तब देवीबक्सजी सब साथियोंको लेकर, जो वाहन अपनेसाथ लायेथे, उसमें सबको बैठाकर वापस झूंझनूं में वहां लेगये, जहां यह प्रतिनिधि-मंडल ठहराहुआथा.

आध घंटेबाद ठाकुरोंकी बैठकमें क्या निर्णयहुआ, यह तो पता नहीं, पर कैरोल साहबने अहलकार नीचे भेजकर कहलवाया कि सभी जनप्रतिनिधि ऊपर आजाएं. पर नीचेसे यही उत्तर आयाकि आपने उनसे केवल दस मिनट और ठहरनेको कहाथा, पर जब आपने उन्हें दस मिनट बाद नहीं बुलवाया, तो वे सभी वापस चलेगयेहैं. प्रत्यक्षदर्शियोंका कहनाहै, कि यह सुनतेही महाक्रोधसे कैरोल साहबने अपने दांतोंसे अपने हाथकी एक अंगुली बुरीतरह भींच ली और कहाकि अगर इस डिपुटेशनमें देवीबक्स सराफ नहीं होता, तो मैं...पर वे समझदार सीनियर अफसर थे, अपनेको संभाला. और तुरंत एक दूतवाहक भिजवाया, इस संदेशके साथ, कि आप वापस आयें ; जो आपलोगोंको ऊपर बुलानेमें विलम्ब हुआ, वह अकारण नहींथा. देवीबक्सजीने अहलकारेको एक पत्र इसप्रकार लिखकर दिया, "श्रीकैरोल साहब, मैं देवीबक्सकी हैसियतसे नहीं आयाथा. आपने एक पब्लिक डेपूटेशन लानेका निमंत्रण दियाथा और एक निश्चित समय दियाथा. आप भी ब्रिटिश गवर्नमेंटके प्रतिनिधिहैं. आपने पब्लिक डेपूटेशनसे निश्चित समयपर भेंट नहीं की. पहले आप क्षमामांगेंकि आपने पब्लिक डेपूटेशनसे नहीं मिलकर, हमलोगोंका अपमान कियाहै. कैरोलने इस पत्रको पढ़ा. उन्होंने लिखितरूपमें क्षमा मांगतेहुए, देवीबक्सजीसे तत्काल डेपूटेशनके साथ वापस आनेका नम्र आग्रहकिया. लिखित क्षमाका पत्र पाकर देवीबक्सजी वापस साथियोंको लेकरगये. समझदारीके वातावरणमें सबकी कैरोल साहबसे भेंट हुई. सारे ठाकुर भी पहलेसे उपस्थित रहे. और, कैरोलसाहबने स्वीकार करलियाकि यह जकातका दंड यहाँके लोगोंपर लगाना उचित नहींहै. और तय हुआकि जकात नहीं लगाई जायेगी. चारोंओर यह समाचार प्रसारित हुआ और देवीबक्जीके प्रति और कैरोलसाहबके प्रति सारे शेखावाटीमें और सारे भारतमें एक सानंद आभार प्रकटकियागया. देवीबक्सजीकी यह असाधारण सफलता, उनके जीवनके अंतिम चरणकी थी. उससमय वे ६७-६८ वर्षकी आयुमें थे, पर उनका प्रचण्ड तेजस्व न्यूनमात्र भी ह्रासको प्राप्त नहीं हुआथा !

फतेहपुरमें ताजियोंका सांप्रदायिक तनाव, दो पिस्तौल लेकर निर्णायक आदेशदेने पहुंचे

दूसरा संस्मरण श्रीगुरुदेवजीने अब सुनाया : एकबार फतेहपुर-शेखावाटीमें ताजियोंके त्योहारपर मुसलमानोंने उद्धत-भावसे प्रश्न खड़ाकरदियाकि अमुक नीम कटवादिया जाए, क्योंकि उसकेकारण उनका ताजिया नहीं निकल पायेगा. इस झगड़ेको जबरदस्ती करनेके लिए, उन्होंने इसबार जानबूझकर ताजिया पिछले सालोंसे और बड़ा बनवायाथा. हिन्दुओंने इस जानबूझकर झगड़ा खड़ाकरनेका प्रतिरोधकिया और अड़गये, कि हम नीम नहीं कटनेदेंगे. फतेहपुर सीकर-शासनके अधीनथा, इसलिए सीकरसे एक थानेदारसाहब ठिकाणेके दसबारह पुलिसजनोंको लेकर वहां पहुँचगये और तम्बू लगाकर घटनास्थलके पासही डेरालगादिया. तीन दिन होगये, उन्होंने मामलेको नहीं निपटवाया. तब चौथेदिन मंडावाले देवीबक्सजी सराफ, अपना ऊंटकसकर, और कमरके दोनोंतरफ दो भरी पिस्तौलें बांध, फतेहपुर पहुँचगये. सीधे थानेदारके तम्बूके आगे ऊंट बैठाया और उससे उतरकर, बिना अग्रिमसूचना दिये, तम्बूमें प्रवेशकरगये. अन्दर थानेदार साहब एकदम भौंचक्का, कि यह कौन आदमी बिना आज्ञा अन्दर आगया. देवीबक्सजीने कहाकि मेरा नाम देवीबक्सहै. थानेदारने कहाकि मैं आपको जानताहूँ. पर आपने यहाँ आनेकी तकलीफ क्योंकी. देवीबक्सजीने कहाकि आज तीन दिन होगये, ताजिए क्यों नहीं उठरहे. थानेदारने कहाकि मैं दोनोंको समझानेकी कोशिश कररहाहूँ. देवीबक्सजीने क्रुद्धभाषामें कहाकि आप एक हिन्दूहैं. आप जानतेहैंकि फतेहपुरके ये मुसलमान जानबूझ कर दंगा-फसाद करनेपर आमादा रहतेहैं. आपसे यह मामला नहीं सलटताहै, तो मुझे बस तीन मिनटका समयदें, अभी ताजिये उठ जायेंगे. थानेदारने फौरन इस प्रचण्ड आदमीकी उपस्थितिका कितना भयंकर अंजाम होसकताहै, इसका जायजा लिया और कहाकि ठीकहै, आप यहां दस मिनट बैठें. मैं आताहूँ. और थानेदारने दंगेपर उतारू ताजियेवालोंसे कहाकि आपलोग नीमकी टहनीसे बचाकर फौरन ताजिये उठा लेजाएं. मैं आपको दसमिनटका समयदेताहूँ. थानेदारके शब्दोंकी कड़ाई और कठोर आदेशकी आवाज सुनतेही दंगेपर उतारू लोगोंके हौसले पस्त होगये. उन्होंने फौरन ताजिया उठाया और नीमसे बचातेहुए वे अपने निर्दिष्ट स्थानपर चलेगये. उनके पीछे पीछे अन्य ताजिये भी निकलगये. फतेहपुरकी जनताने चैनकी सांसली. देवीबक्सजीने थानेदारके कंधेपर शाबाशी की थापदी. और कहाकि मैं खुद सीकरके ठाकुरसाहबसे तुम्हारी हिम्मतकी दाद देकर आऊंगा ! फिर वे शहरमें आये. फतेहपुरकी जनताने उनका भरापूरा मानकिया. तब वे निश्चिन्त होकर अपने ऊंटपर वापस मंडावा आगये.

इसीतरहसे देवीबक्सजी बराबरही सार्वजनिक विवादोंको अपनी पैनीदृष्टिसे, उनका निदान जानकर, उनका अचूक उपचार कर दियाकरतेथे. कभी भी देवीबक्सजीने कोई गलत निर्णय नहीं लियाथा.

शेखावाटीमें दुखद बेगार-प्रथा, जयपुर-कौंसिलसे इस प्रथाको सदाकेलिए उठादेनेका परवाना लाये !

३ तीसरा संस्मरण श्रीगुरुदेवजी खेमाणीने यों सुनाया : यह बात १९३० से पहलेकी होनीचाहिए. जयपुरराज्यमें और अन्य देशीरियासतोंमें बेगार लेनेकी प्रथाका बहुत पुराना रिवाजथा. शेखावाटीके ठिकाणोंमें भी इस प्रथाका दुख सैकड़ों-सैकड़ों लोग भोगरहेथे. देवीबक्सजी इसका निर्मूल उच्छेदन करनेकेलिए उपयुक्त क्षणकी प्रतीक्षाकररहेथे. आखिर प्रभुने वह अवसर उन्हें देदिया. उनके यहाँ एक बढ़ई कामकरताथा. मंडावाके ठाकुरलोग भी ताकमें रहतेथेकि किसी न किसी तरह देवीबक्सजीको परेशान किया जाए. खासतौरसे इसतरहकी हरकतकरनेमें ठिकाणेके दुष्टप्रकृतिके कारिंदे सचेष्ट रहतेथे. तो एकदिन उस बढ़ईको कारिन्दोंने तकादा करदियाकि कल तुझे गढ़में आकर काम करनाहै. इसका सीधा मतलबथा कि कल तेरी बेगारीकी तारीखहै. बढ़ईने यह बात देवीबक्स जी से कहदी. देवबक्सजीने कहाकि जब तुझे कोई बुलाने आए, तो तू मना करदेनाकि जब तक देवीबक्सजी नहीं कहेंगे, मैं यहाँसे उनका काम छोड़कर नहीं जासकता. वैसाही हुआ. तो, देवीबक्सजीकी बुलाहट गढ़में हुई. वहाँ देवीबक्सजीके पहुँचनेपर ठाकुरसाहबने कहाकि आपने आज उस बढ़ईको गढ़में आनेसे मनाकरदिया. देवीबक्सजीने कहाकि प्रजा आपको 'अन्नदाता' कहतीहै. आप इन गरीबों का, मजदूरों का अन्न क्यों छीनतेहैं. आपको कभी नहीं छीननाचाहिए. ठाकुर साहबने कहाकि आप तो हमको कहदेतेहैं. पर जयपुरके सरकारी कारिंदे यहाँ आतेहैं, तो मनचाहे आदमीको पकड़कर बेगार लेतेहैं, तब तो वहाँ जाकर आप कुछ नहीं कहते. देवीबक्सजीने उसीसमय वहाँके एक कारिन्देसे कहाकि जाकर मेरी सेठाणीसे कहनाकि मैं यहीं गढ़से ही जयपुर जाऊंगा. मेरा ऊंट कसवाकर भेजदे. तीन-चार दिन वहाँ रहूँगा, और सामान भी साथकरदे. देवीबक्सजी वहीं गढ़में रहे, बेगारसे गरीबोंपर अत्याचारहोताहै, यह ठाकुर साहबको समझातेरहे. जल्दीही ऊंट कसाकसाया गढ़में आकर खड़ाहोगया. वहींसे देवीबक्सजी जयपुर चलेगये. वहाँपर तीन-च्चार दिनरहे. और फिर वहाँसे लौटकर सीधे गढ़में ही गये. जयपुरदरबारने जो परवाना दियाथा, वह ठाकुरसाहबको दिखायाकि यह देखलो, मैं परवाना साथमें लायाहूँ. उस परवानेमें लिखाथाकि आजकी तारीखसे सभी ठिकाणोंमें बेगार प्रथा समाप्तकीजातीहै और अब इसको कोई न कराये. मंडावाके ठाकुरने देखकर पहलीबार यह अनुभवकियाकि देवीबक्सजीका प्रभाव जयपुरके दरबार तक भी है.

पर, सच बात यह थी, कि देवीबक्सजी कहींपर अपना प्रभाव आजमाने या उसका सूत्र खोजने-तलाशने नहीं जातेथे. वे लोककल्याण, या लोकन्याय क्या होनाचाहिए, इसपर पहले अपने सैद्धांतिक विचार स्थिर करतेथे, उसकी प्राप्तिकेलिए क्या-क्या करताहूँ

संघर्ष सामने आसकतेहैं, उनको भी सोचलेतेथे. और तब अपनी शक्ति तोलकर, वे कोई सोचा हुआ सधा कदम उठायाकरतेथे. यह इतिहासका ज्वलंतसत्यहै, कि शेखावाटीमें यदि बेगार प्रथा उठाईगई, तो उसका सारा श्रेय देवीबक्सजी सराफ को ही है. वे शेखावाटीके दरिद्र-नारायणके प्रति इसी तरह लोकसमर्पित रहेथे.

मंडावाके एक 'पाने' की आर्थिकस्थितिकी शोचनीयताका निदान, असहाय ठाकुर

४था संस्मरण अब श्रीगुरुदेवजी खेमाणीने सुनाया : देवीबक्सजीके जीवनका सबसे अधिक चौंकानेवाला तथ्य यहथाकि वे एक धनाढ्य सेठके पुत्र-रूपमें जन्मेथे, लेकिन उन्होंने कभी भी अपना बाह्य आडंबर धनाढ्य सेठका सा नहीं रखा. वे गरीबोंके त्राणदाता रहे, लोकहितायके मसीहा रहे, ठाकुरोंके शोषणके खिलाफ सदा जेहाद छेड़तेरहे और सामाजिक संगठनोंमें अटूट आस्था रखतेरहे. पैतृकधनको सदा ही उन्होंने विवेकके साथ व्ययकिया. दूसरोंका दुःख हरनेमें उन्होंने अपना पैसा उदारहृदयसे बहाया. और, पूरी आंख खोलकर रहेकि शेखावाटीके किसी अंधियारे कोनेमें कहीं कोई भाई तकलीफ तो नहीं पारहाहै.

जिसतरह भाईयोंमें आपसी बंटवारा होताहै, उसीतरह एकबार मंडावाके ठाकुरभाईयोंमें बंटवाराहुआ और ५० गांव आपस में बंटगये, २५-२५ गांवोंके दो पाने होगये. इनमेंसे एक पानेकी आर्थिकस्थिति सदाही संतोषप्रद रही, पर दूसरे पानेकी आर्थिक स्थिति ऐसीरही, कि वे बाजारसे उधारही मांगतेरहे. ठाकुरोंको उधार कौन दे, क्योंकि उसकी वापसीकी उम्मीद कभी रहती नहीं. तो एक दिन इस पानेके ठाकुरसाहबने देवीबक्सजीको गढ़में बुलाया और कहाकि आप तो सेठहैं, धनकी सारी गतियोंसे परिचित हैं, हमें बताइएकि दूसरे पानेमें तो सदा खुशहाली रहतीहै, पर हमारे पानेमें सदा उधारीहीसे काम चलताहै. देवीबक्सजीने कहाकि इसमें आपके पानेमें ही कोई दोषहै. तो ठाकुरसाहबने कहाकि इसे दूर करनेमें हमारी मदद कीजिए. देवीबक्सजीने कहाकि हम करदेंगे, पर इसीसमय अपने गुमाश्तोंको बुलाइए. वे बुलायेगये. देवीबक्सजीने कहाकि आजसे कोई खर्चा ठाकुरसाहब मांगेंगे, तो वे उसका हुकुम मुझे देंगे और तुमलोग मेरे हुकुमकी तामील करोगे. पर तुम्हारे यहां जो आमद होगी, वह बहीमें पूरी चढ़ाई जायेगी और मेरे हुकमके बिना तुमलोग एक भी पैसा खर्च नहीं करोगे. तय होगया, तो काम होनेलगा. और खजानेमें ४-५ हजार रुपया जमा भी होगया. पर जो गुमाश्ते-कारिन्दे ऊपर ही ऊपर ठिकाणेका रुपया गोलमाल कररहेथे, उनकी नाकमें दम आगया और उन्होंने ठाकुरसाहबको धमकी देदीकि इस बाणिएके हुकुममें हम नहीं रहेंगे. तो ठाकुरसाहबने देवीबक्सजीको बुलायाकि ये लोग ऐसा कहतेहैं. देवीबक्सजीने कहाकि इसका इलाज मेरेपास नहीं है. पर चार-पाँच महीनेमें आपके खजानेमें रुपया जमा होनेलगाहै. अब आप समझ जाइएकि ये क्यों काम करनेसे इंकारकरतेहैं. इनको ठिकाणेमें रुपया जमाहो, इसकी चिंता कहाँहै. इनको तो अपनी चिंताहै ठाकुरसाहब चुप हो गये. देवीबक्सजी वापस चलेआए. पर, उसदिनसे ठाकुरसाहब और उनके कारिंदे देवीबक्सजीसे आंख बचाकर रहनेलगे ! देवीबक्सजीने यह प्रमाण देदियाथाकि वे ठिकाणेके हितमें अपना बहुमूल्य समय देनेको तैयारहैं.

क्रिमनल केसोंके और कानूनके भारी विशेषज्ञ, शेखावाटीके वकीलोंके परामर्शदाता

गुरुदेवजी खेमाणीने अब पांचवां संस्मरण सुनाया :

श्री देवीबक्सजीको अपने जीवनमें, विशेषरूपसे उस जीवनमें, जिसको उन्होंने मंडावामें रहकर व्यतीतकिया, क्रिमनल मामलोंमें ज्यादा उलझनापड़ा. इसका अर्थ यह नहींहैकि उन्हें अपने ऊपर आये क्रिमनल मामलोंको झेलना पड़ा. इसका अर्थ यहहैकि आयेदिन शेखावाटीमें असामाजिक तत्व और ठिकाणोंके गुमाश्ते-कारिन्दे कोई न कोई क्रिमनल किस्मकी वारदात करतेरहतेथे और उसका त्रास साधारण प्रजावर्गको भुगतनापड़ताथा. प्रजाके पास ऐसा रहनुमा था नहींकि जो ऐसे आततायियोंके आतंकसे उनकी रक्षाकरसके. इसलिए देवीबक्सजी आगे बढ़कर ऐसी क्रिमनल हरकतोंको झूंझूनूंके नाजिमके यहां जाकर, क्रिमनल केस करके, उसका मुकदमा लड़ाकरतेथे और उसमें अपना पैसा भी खर्च करतेथे. नाजिम न्यायप्रिय हो या न हो, पर वे यह महसूस करनेलगेथेकि देवीबक्सजी लोकन्यायके पक्षमें हैं और वह उन्हें ज्यादा मिलेगा, तो आततायियों और बदमाशोंका आतंक उतना ही न्यून होताजायेगा.

प्रायः हम देखतेथेकि दूरपासके गांवोंके वकीललोग उनके पास आते, अपना मुकदमा सुनाते, कौनसे कानूनी प्वाइंटको लेकर वे मुकदमा लड़रहेहैं, यह उन्हें बताते और उनकी नेक सलाहको ध्यानसे सुनाकरते. उन्हें यह पक्कीतरह जंचगयाथाकि क्रिमनल कानूनोंके ये विशारद हैं और इनकी नेक सलाह बहुत दूर असर डालनेवालीहै.

जब देवीबक्सजी स्वयं कोई क्रिमनल मुकदमा लड़तेतो प्रायः वे वकील नहीं करते. उनसे उतनी ही मदद लेते, जहांतक कानूनी कागजपत्र तैयारकरनेकी होती. उसके बाद वे अदालतमें न्यायाधीशके सामने खुदही जिरह-बहस करनेमें निपुणता दिखाया-करतेथे. इस मामलेमें सारे शेखावाटीके मारवाड़ीभाई भी उनके बतायेरास्तेपर चलनेमें ही अपना हित देखतेथे.

मंडावाकी अबोध वैश्य-कन्या, घनघोर आतंकवादी गुंडेके लिए महाकाल बने

छठवां संस्मरण श्रीगुरुदेवजी खेमाणीने अब सुनाया : देवीबक्सजीको प्रायः क्रिमनल केसोंका सामनाकरनेका मौका मिलताथा और वे उसमें युवकोचित शक्ति लेकर जुटजायाकरतेथे. यह घटना उनकी मृत्युसे कुछही दिन पूर्वकी, दोचार महीने पहलेकीहै. तब वे रोगशैयाशायी थे और गांवके बाहर अपने नोहरेमें रहाकरतेथे. एक दिन मंडावाके ही एक वृद्ध वैश्य और उनके युवा पुत्र रोतेहुए आए, और उन्होंने बतायाकि किसतरह मंडावाके सबसे नामी गुंडेने उनकी अबोधा कुंवारी कन्याके साथ बलात्कार करदियाहै. मंडावामें इस घटनासे आक्रोश फैला, पर किसीमें यह हिम्मत नहींकि वे उस गुंडेका सामनाकरें. देवीबक्सजीने शांतिके साथ यहीकहाकि जो घटना होगईहै, उसको तो मैं लौटा नहीं सकता. पर मैं क्या करताहूँ, इसकेलिए धैर्यरखो.

छोटेबड़े ठिकाणोंमें निरंकुश और अत्याचारी कारिंदे स्वयं दुखद घटनाओंकी सृष्टि करतेरहतेथे और उनके ही संरक्षणमें समाजविरोधी गुंडे प्रश्रय पायाकरतेथे. देवीबक्सजीने अपनेजीवनमें ऐसे कितनेही गुंडोंको ठिकाने लगायाथा. दूसरेदिन उन्होंने किरायेकी उस मोटरको बुलाया, जो सवारियोंको लादकर बसके रूपमें चलाकरतीथी. उसकी सीटें निकलवाईं और उसमें अपना पलंग बिछवाया, उसपर लेटकर ही वे झुंझनूं पहुँचे. वहाँपर उसी बसमें अपनी शैयापर लेटेहुए, उन्होने नाजिमके यहाँ उस गुंडेके खिलाफ मुकदमा डलवाया और जोरदार अपीलकर उस गुंडेको गिरफ्तार करवाया. नाजिमने भी इस मामलेको बहुत गंभीररूपसे लिया और उस गुंडेको कड़ेसे कड़ा दंडदेतेहुए, उसे छः सालका कठोर कारावासदिया. सारे शेखावाटीमें इससे एक नैतिक मनोबल बढ़ा और जनतामें यह जागृति आईकि समाजविरोधी तत्वोंके खिलाफ हौसलालेकर कड़ा प्रतिरोध करनाचाहिए. मंडावामें फिर सदाकेलिए उस गुंडेका खात्मा होगया. इस घटनाके बाद, देवीबक्सजीका नश्वर शरीर भी अधिक दिन नहीं रहाथा.

एक प्रतिद्वंद्वी वैद्यराजजीके पुत्रका जीवन सर्वनाश होनेसे बचाया

सातवां संस्मरण श्रीगुरुदेवजी खेमाणीने इसतरह सुनाया : एक वैद्यराज मंडावामें अच्छीख्याति रखतेथे. वे एक-दो वैद्य-सम्मेलनोंके अध्यक्ष भी हुएथे. किसी जमीनके मामलेमें उन्होंने देवीबक्सजीपर मुकदमा कररखाथा. इन वैद्यराजके वयस्क पुत्रने चिकित्साशास्त्रकी परीक्षादी और अपने पिताकी देखरेखमें चिकित्सा भी करनेलगे. इस वयस्कपुत्रने एक रोगीकी आँखोंकी चिकित्सा की और दुर्भाग्यसे रोगीकी आँखकी ज्योति चलीगई. रोगीने इससे दुखीहोकर उस चिकित्सक-पुत्रपर मुकदमा करदिया. नाजिम साहबने उस पुत्रको गिरफ्तार करलेनेका हुकुम करदिया. वैद्यराजजी इस गिरफ्तारीसे हिलगये. अब उनके सामने एक ही उपाय रहगयाकि वे देवीबक्सजीकी शरणमें जावें. तो वे गये. देवीबक्सजी अपनी शैयापर लेटेहुएथे. देवीबक्सजी घटना सुनही चुकेथे. देवीबक्सजीने उनसे कहाकि बैठिये. पर वैद्यराजजी खड़ेही रहे और बोलेकि मैं आज नहीं बैठूँगा. मैंने तो आपपर मुकदमा कररखा है. पर, अब आप मेरे पुत्रको बचाइए. देवीबक्सजीने कहाकि मुकदमा अपनी जगहहै. पर आपका पुत्र मेरा पुत्र भी है. उसने बहुत गलतीकीहै. उसे ऐसे रोगीपर हाथदेना नहीं चाहिए था, जिसे वह सम्हालसकनेमें समर्थ नहीं था. पर देखो, कुछ करूंगा. आप जाइए.

उसके बाद देवीबक्सजी सक्रियहुए. अपने खर्चेसे वे मंडावासे झुंझनूं आयेगये. नाजिम साहबके सामने अपना प्रतिनिधित्व रखा, "शेखावाटीमें वैसेही चिकित्सकोंकी अत्यधिक कमी है. अगर इसतरह सभी चिकित्सक गिरफ्तार होतेरहेंगे, तो शायद यहाँके चिकित्सक बाहर शहर चलेजायेंगे. अवश्य एक गलती हुईहै, पर पहली गलतीपर इतना बड़ा दंड नहीं मिलनाचाहिए." नाजिम-साहबने देवीबक्सजीके प्रतिनिधित्वपर विचारकिया और उस वयस्क पुत्रको जेलसे रिहा करदिया. बस, मामूलीसा आर्थिक दंडदिया.

इस घटनामें, देवीबक्सजीका हृदय लघु सीमितताओंसे ऊपर था और कितना विशाल था, इसका उत्तम परिचय मिलताहै. वे मौकेपर अपनी विशाल हृदयताका परिचय अवश्यही अवश्य दियाकरतेथे. तब परस्परका वैमनस्य उनकेलिए अर्थहीन होजाया करताथा. योंभी, देवीबक्सजीने जिन्दगीमें किसीकेसाथ वैमनस्य कियाही नहींथा. वे सभीके, चाहे-अनचाहे, मित्र ही बनकर रहेथे.

देवीबक्सजीपर जीवनमें पहलीबार जिसने हाथ उठानेका उन्मादकिया, उसपर तत्काल दो फायरकरनेकी व्युत्पन्नमति

आठवाँ संस्मरण, हम इसके पहले, कि श्रीगुरुदेवजी खेमाणीका सुनायें, मंडावामें सुनीहुई एक जनश्रुतिकी चर्चाकरलें. हम कृतज्ञहैं श्रीगुरुदेवजीके, कि उन्होंने देवीबक्सजी और मंडावा ठिकाणेके प्रति हमारे हाथों एक अपकार और एक अन्याय करनेसेबचालिया. जब जनश्रुतियां प्रतिफलित होतीहैं और दुहरी या तिहरी तहोंमें सिमटकर लोकसमाजमें प्रचारितहोतीहैं, तो उसमें कुछ अनायास नया जुड़ताहै और यथार्थ सत्य बहुत दूर रहजाताहै. देवीबक्सजी सराफ आज शेखावाटीमें, और मंडावामें, जनश्रुतियोंमें ही अमरप्राण बनेहुएहैं. उनके नश्वर शरीरको गयेहुए, इस १६८६ में, लगभग ५० वर्ष बीतगयेहैं, लेकिन उनके प्रति लोकसमाजकी आस्था और श्रद्धा इसीतरह उन्मुक्त बनीहुईहै.

मंडावामें देवीबक्सजीके प्रति जो प्रचलित जनश्रुतियाँ प्राप्यहैं, उनकी जब हम टेपरिकार्डिंग कररहेथे, तो एक ऐसी

घटनाका प्रसंग मिला, जिससे हृदयको ठेस पहुँची और ऐहसासहुआकि मंडावाका ठिकाणा देवीबक्सजीके प्रति कितना कृतघ्न सिद्ध हुआ. लोगोंने सुनायाकि मंडावाके एक कारिन्देने देवीबक्सजीको बीचबाजार जूतेसे मारा. उससे अपमानित होकर वे मंडावाको छोड़कर, फिर मंडावा कभी नहीं आये. पर तत्काल दूसरी जनश्रुति यह मिलीकि लोकापवादसे डरकर मंडावाके ठाकुरने उनको वापस मंडावा बुलवालिया, पर लौटकर वे अपनी हवेलीमें जो घुसे, तो फिर उस हवेलीसे कभी बाहर ही नहीं निकले, निकली उनकी केवल अर्थी. हमारा यह सौभाग्यहै, कि श्रीगुरुदेवजी खेमाणीने इन दोनों जनश्रुतियोंको निराधार बताया और कहाकि यह सचहै, कि देवीबक्सजीसे कुछ लोग डाह रखतेथे, क्योंकि उनके रहते, कुछ उद्दंड लोगोंकी दाल बाजार और शहरमें गल नहीं पातीथी. इसलिए, जब वे एक दिन बाजारमें एक दुकानमें बैठेहुथे, तो एक आदमी उनकेपास आया. देवीबक्सजी व्याघ्र-दृष्टि पुरुष थे. वे उस व्यक्तिके पास आनेतक सतर्क होचुकेथे, क्योंकि उसके इरादेको उन्होंने भांपलियाथा. जबतककि उसका हाथ ऊपर उठे, उससे पहलेही उनका हाथ अपनी पिस्तौलपर पहुँचचुकाथा. वे एक कमरी पहनतेथे और उसकी अन्दरकी जेबमें एक पिस्तौल भरीहुई रखाकरतेथे. उन्होंने तत्काल उस व्यक्ति पर फायर करदिया···पिस्तौल निकलनेसे पहलेही, वह व्यक्ति देवीबक्सजीपर हाथ चलाये, इससे पहले ही भाग खड़ाहुआ···बाजारमें यह समाचार आगकीतरह फैलगया. हम वहीं मंडावामें थे. हम तत्काल देवीबक्सजीके घरपर पहुँचगये और देवीबक्सजीसे पूछाकि क्या हुआ. बोलेकि अभी वापस लौट जाओ, तीन दिन बाद बताऊंगा. तो हम उनकी आज्ञामें रहतेथे, लौट आये. फिर तीन बाद उनके पास गये. उन्होंने कहाकि घटना घटी नहीं और वह आदमी पिस्तौलकी फायरके डरसे भागगया. हमने पूछाकि आपने तीन दिन पहले क्यों नहीं यह बात बताई. बोलेकि पहले मैं यह जान लेना चाहताथाकि वह आदमी अब क्या करताहै और क्या मंडावामें ही रहताहै या झूंझनूंके पुलिसथानेमें कोई रपट लिखवाताहै. मैं शान्तिके साथ इस मामलेकी क्रिमनल कानूनके साथ समीक्षा करलेना चाहताथा. पर वह बदमाश मंडावासे गायब होगयाहै और अब सब शान्तिहै.

तो, गुरुदेवजी खेमाणीने बतायाकि देवीबक्सजी इस घटनासे न तो उत्तेजितहुए, न ही उन्होंने मंडावा छोड़ा. वे व्याघ्र-पुरुषकी तरह मंडावामें ही स्थिरमति रहतेरहेथे. उनके साथ घटी यह घटना सन् १९२५ से १९३० के बीचकीहै.

अंतिम वर्षोंमें तपेदिक रोगका आक्रमण, मंडावामें ही यशःशरीरका त्याग

अन्तमें, श्रीगुरुदेवजी खेमाणीने कहाकि जीवनके अंतिम वर्षोंमें उनको टी. बी. होगईथी. उससमयतक टीबीका कोई इलाज नहीं निकलाथा. टीबीका अर्थ होताथाकि अब मौतका पैगाम आगयाहै. पर देवीबक्सजी इस रोगसे पीड़ितहोकर निराश और आक्रान्त नजर नहीं आये. वे गांवकेबाहर अपने नोहरेमें पलंग बिछाकर केवल लेटेरहतेथे और आयेगयेकी समस्याओंमें अपनेको स्वस्थहृदय व्यस्त करलियाकरतेथे. जब उनका शरीरांत हुआ, तो मंडावाके सैकड़ों लोग उनके शव-दाहमें शामिलहुएथे. आर्यसमाज-पद्धतिसे यज्ञ हुआ, वेदमंत्रोंका उच्चारणहुआ. बाहरगांवके लोग भी इस शोकके समय अपनी सम्वेदना प्रकटकरने आये. देवीबक्सजी अपनेपीछे उपकृत लोकसमाजमें असीम जनश्रुतियाँ छोड़कर गये. उन जनश्रुतियोंमें व्याप्त कथानक ही उनके सच्चे स्मारक बने हुएहैं.

जीवन्त कहानी का उपसंहार

देवीबक्सजीकी कहानी १९३५से पहले ही पूर्ण होलेतीहै. उनके पिताश्री और स्वयं उन्होंने मंडावा ठिकाणेपर अनेक रूपाय उपकारकियेथे. इसप्रकारका एक दृष्टांत, देवीबक्सजीके जीवनका, यहाँ देना हम समीचीनमानतेहैं. लादूरामजीका यह संस्मरण सचमुचही इतना मर्मस्पर्शीहैकि देवीबक्सजीकी उदात्त मानवतापर अनायासही मुंहसे 'वाह' निकलपड़ताहै. लादूरामजीने कहा : ''तब हमारे ठाकुरसाहबका नाम इन्द्रसिंहजी. इन्होंनेही भीमसिंहजीको गोद लियाथा. उनके एक बाईथी. वह इन्द्रसिंहजीकी भाण थी. उसके रिश्तेकी बात चलरहीथी. तो दूसरे पाणेके ठिकाणेदार थे जयसिंहजीके दादाजी. उन्होंने तानेका बोल बोलदियाकि क्या किसी रियासतके धणीके जाओगे ? उससमय इस पानेका कामदार था एक कायथ. वे बड़े चतुरथे. उन्होंने करौली जाकर बाईका सम्बन्धकिया. मंडावा तो छोटा ठिकाणाथा, पर करौली एक रियासत थी. उसके पहले दो राणियाँ थीं. उन्होंने उनको प्रलोभन देकर यह सम्बन्धकरवादिया. मंडावाका नाम तो मांड्गढ़ बताया. जिसे हम देहात मीठावास कहतेहैं, उसका नाम मीठलगढ़ बताया. जो यहाँपर बीड़है, उसकेलिए यह कहदियाकि १२ कोसमें बगीचाहै. इसतरहकी घाताबाजी देदी. जब वे बियाह करने आये, तो ठिकाणेमें इतना धन नहीं था. इसलिए उन्होंने अपने पानेके आसामियोंसे धन कर्जा लेलेकर बियाह किया. तो हंगामा ऐसा हुआकि इन्द्रसिंहजीने बाईके बियाहमें २२ हाथी भेलाकियाथा. राजीखुशी बियाह हो गया, पर वे स्वयं कर्जसे दबगये.

''देवीबक्सजी उनदिनों शाहीबालक थे. उनकेपास धन खूब था. कलकत्ता रहतेथे. एकबार वे कलकत्तासे मंडावा आये. उनदिनों हालत यहथीकि ठाकुर इन्द्रसिंहजीको बाजारमें चार पैसेकी चीज भी कर्जेकेनामपर नहीं मिलतीथी. उनकी ऐसी पोजीशनथी. ऐसी स्थिति देखकर देवीबक्सजीको शर्म आई. उनको यह विचारहुआकि आपां इस ठिकाणेका आसामी, अपनी तो इज्जत है चारोंतरफ, यहाँ और कलकत्तामें और अपने जो सरदारहैं, उनकी यह पोजीशन कि चार पैसेकी चीज भी नहींमिले. तो

यह बात उनके तनमें लगी, मनमें लगी. उन्होंने जाकर ठाकुरसाहबसे बातकी. उनसे देवीबक्सजीने कहाकि आप अगर हमारे कंट्रोलमें रहें, तो हम आपका कर्जा साफ करदें, करवादें. ठाकुरसाहबके जंच गई, बोलेकि जैसे भी कर्ज उतरे, वह तरकीब बतलाइए. तो, देवीबक्सजीने रायदीकि महाराज, आप कलकत्ता चलो. और वे ठाकुरसाहबको कलकत्ता लेगये. वहाँ उन्हें लेजाकर, मंडावाकी जितनी भी आसामियां थीं, उन्हें बुलवाया. वहाँ सबके आनेपर सेठजी देवीबक्सजी सराफने कहाकि आप लोग नकदी रुपया वापस चाहतेहैं, वह तो है नहीं. जिसका जितना रुपयाहै, वह उतने रुपयेकी जमीनका पट्टा करवाले. तो, उन्होंने सबके रुपयोंके एवजमें जमीनोंका पट्टा करवादिया. इस तरह उनका काफी कर्ज उतरगया. फिर देवीबक्सजीने कहाकि मैं इनको कलकत्ता लायाहूँ. यहाँपर इनका सम्मान होनाचाहिए. तो उनको वहाँपर नारियल, नजर आदिसे उनका सम्मान कियागया, और उन्हें वापस मंडावा लायागया. यहाँ आकर उन्होंने ठाकुरसाहबसे कहाकि महाराज, आपका जो बाजारका बाकी कर्जहै, उसको भी मैं चैक करूँगा और उसको दूर करवाऊँगा; बाजारकी पूछताछ कर, उन्होंने उनका वह कर्ज भी दूर करवादियाथा.

"देवीबक्सजी कैसेदिलके थे, यह बात तब सामने आई, जब, ये देशमें जागृति लानेके काममें लगे. दिलके कट्टर थे ही. इन्होंने मंडावामें आर्यसमाज-मंदिर बनवाया. और उस मंदिरका पट्टा अजमेरवालोंको देदिया, जहाँपर आर्यसमाजका जन्म हुआथा.

"देवीबक्सजीने केवल मंदिर बनवाकरही संतोष नहीं किया. अब मंडावामें सालमें एकबार वार्षिक अधिवेशनकरनेलगे. क्योंकि मंडावामें बहुसंख्यक लोग जाट ही हैं, तो उसका प्रतिफल यहहुआकि आर्यसमाजका जब वार्षिक अधिवेशनहो, तो उसके जलसेमें जाट और जाटनियोंकी भीड़ आनी शुरूहोगई. और, पहलेही साल उन्होंने उस वार्षिक अधिवेशनमें औरतों और मर्दों को जनेऊ दिलवाकर, एक क्रांतिका वातावरण और जागृतिका दौरदौरा व्याप्त करदिया.

"नाथूरामजीके तीन कन्याएं और चार लड़के हुए: बालमुकुन्दजी, देवीबक्सजी, रामचन्द्रजी और बृजमोहनजी. तीसरेपुत्र रामचन्द्रजीका लड़का बासदेवजी हुआ. सेठ देवीबक्सजी बड़े चतुर और कट्टर आर्यसमाजी थे. बृजमोहनजीका मनहुआकि किसी दूसरेको गोद लेलें, पर उन्होंने उनको रोका और कहाकि तुम रामचन्द्रको ही गोद लेलो. वह छोटा भाई है, उसे ही गोद लेलो और जो लड़का रामचन्द्रका बासदेवहै, उसको हम लेलेंगे. तो इसतरह तीनघरोंका उन्होंने एकही घरकिया. पर तब बात लोकसमाजमें यों कही जातीथीकि नाथूरामजीके घरमें तीन घर होगयेथे, पर आज एकही घर होगया. नहीं मालूमकि नाथूरामजीके पास कितना धन था. इसका ओरछोर किसीको पता नहीं लगा. [पाठक-गण पिछले पृष्ठ ८ पर १९वीं पंक्तिमें नाथूरामजीके पुत्रोंकी संख्या और नामोंमें भी संशोधन करनेकी कृपा करेंगे.]

"देवीबक्सजीका शरीर शान्तहोगया. बासदेवजी कभी मंडावा आते, कभी यहाँसे चलेजाते. उनके समयमेंही यहांपर फूलचन्दजी चोखानी आयेहुएथे. उन्होंने सबसे कहाकि देवीबक्सजी सराफ यहांपर जागृति लायेथे. अब मंडावामें म्यूनिसिपल कमिटी बनगईहै. इसलिए इसका चेयरमैन उनके ही परिवारका आदमी होनाचाहिए. यह प्रस्ताव चोखानीजीने जयसिंहजी ठाकुरके आगे रखा. उन्होंने सोचकर कहाकि ठीकहै, उनको बनवादो. तो, यहांपर उससमय गोपालजी पंडित चेयरमैन थे. जब पंडितजीने सारे प्रस्तावको सुना, तो उनके जंचगईकि अगर बासदेव सराफ चेयरमैन बन जायेगा, तो तुम्हारी पटड़ी बन्दहोजायेगी. अपनी कुटिल बुद्धिसे तत्काल एक नया षड़यंत्र किया और कहाकि ठहरें. पहले उन्होंने वोटर-लिस्ट निकलवाई और कहाकि ये वोटर ही नहीं हैं. यह चेयरमैन बनेगा कैसे. यह मंडावाका वोटर होतो आप देखलें. बासदेवजीको इस कुटिलताकी बात सुनकर एक नफरतहोगई. उनको बड़ा विचारहुआकि जिस मंडावामें हमारे दादा-पड़दादाने सेवाका इतना कामकिया, आज मैं मंडावाका नागरिक तक नहीं हूँ, और आगेसे अब मैं मंडावा आनाही पसंद नहीं करूंगा. उन्हें इतनी नफरत हुई, कि वहां सारी जमीनजायदाद, जो भीथी, वह सब उन्होंने एकएक करके बेचनी शुरू करदी. और वंशके नामकेलिए, मंडावामें कोई चिन्ह बाकी नहीं रखा."

* * * * * * * * *

१९८६ तक, बीसवींसदीमें, सारे राजस्थानके और भारतके मारवाड़ीसमाजमें ऐसे लोकसेवी २००-२५० से अधिक नहीं हुएहैं, जो अपने चरणचिन्ह पीछे छोड़ गयेहों. उनमें भी, जिनके जीवनका अमिट माहात्म्य रहगयाहै, ऐसे तो यही १०-११ ही रहेहैं. उनमेंसे हम एक देवीबक्सजीको गिनतेहैं. माहात्म्य, रूढ़भाषामें, या तो गंगा और जमुना जैसी नदियोंका है, या फिर दसबीस तीर्थस्थानोंका है, पर कभी हमने आंखखोलकर नहीं देखा, यथार्थ आचमनीय माहात्म्य पवित्रात्मा जीवट पुरुषोंका भी हुआकरताहै. देवीबक्सजीने एकाकी जीवन जीया, पवित्र देवात्मा व अन्तःसलिला नदीके तुल्य वे सुवासित व्यक्तिरहे. वे इसलिए और भी लोकसंग्रहकेलिए वांछनीय शुभ और मंगलके प्रतीक बने, क्योंकि उन्होंने जीवनभर दियाही दिया, किसीसे कुछ नहींलिया. उस-जमानेमें आर्यसमाजी बनकर, उन्होंने हजारों अपदस्थ व्यक्तियोंको सवर्ण बनाकर इतना अमित लोकोपकारकिया, जितना १००-२०० देवालय-निर्माणसे भी संभव नहीं होसकता. मंडावाके सराफ-वंशमें जन्म लेकर, वे धनके सीमित दायरेमें बन्द नहीं रहपाये. नाथूरामजी यदि बड़भागी व्यक्तिहुए, तो उनके सुपुत्र देवीबक्सजी अनेक माहात्म्योंके ज्योतिपुंज होकरही इस लोकसे विदाहुएथे.

देवीबसजी सराफकी कहानी बहुत लम्बी है. भविष्यमें जो भी व्यक्ति इनकी इस गाथाको संपूर्ण करेगा, वह काल-देवता के हाथों अवश्य ही अभिनंदित होगा, यह हम साधुवाद दियेदेतेहैं.

द्वितीय अध्याय

*

विदेशीवस्त्रके व्यवसायका अमोघ अस्त्र, शाश्वत सनातनी जीवनघूँटी पीयेहुए वैश्योंका जीवनदर्शन निरस्त्र

५ मंडावाके सराफ-वंशके वटवृक्षसे उद्भूत सेठ मोहनलाल सराफ

भारतीय दासताका ६००वां वर्ष था १६वींसदीमें. यदि हम अणुवीक्षक यंत्र लेकर इन ६०० सालोंकी जांच-परीक्षाकरें, तो निश्चयही हमें कमसेकम ६०० ऐसे भारतीय हुतात्मा अवश्य मिलजायेंगे, जिन्होंने अपनी रीतिनीतिसे भारतकी और भारतीयताकी, दासतासे ग्रस्त, बेणियोंको उन्मुक्तकरनेका प्रयासकिया. १६वींसदीमें यह प्रयास सामूहिक आन्दोलनमें बदलतागया. दासता आरोपितकरनेवाले शक्तितत्व कितने ताकतवर और खूंखारहैं, इसकी परवाह इस आन्दोलनमें किसीने नहीं की. इसी १६वींसदीमें बहुतबड़ी संख्यामें राजस्थानके वैश्योंने राजस्थानसे बाहरनिकलकर अंग्रेजी सत्ता द्वारा संरक्षित नईमंडियोंमें प्रवेशकरना प्रारम्भ किया. अंग्रेजीसत्ता द्वारा बारूदभरी संगीनोंके सायेमें विदेशीवस्त्रोंका व्यवसाय भारतपर दुहरी गुलामीकी तरह थोपदियागयाथा. बीसवींसदीके ७०-८० बरस बीतजानेपरभी, एकांगी राष्ट्रीय दृष्टिसे इन राजस्थानी वैश्योंको अभीभी अनादर व तिरस्कारके कोपभाजन बनाकर देखेजानेका एक सस्ता नजरियारहाहै. यह नजरिया विकृत राजनीतिके स्तरपर अधिक मुंहबोला बनाहुआहै. हमारा उनसे मौलिक मतभेद है. हमारा दृढ़मतहै, कि इन राजस्थानी वैश्योंने १६वींसदीसे ही अंग्रेजीसत्ताके व्यूहचक्रमें प्रविष्टहोकर, भारतीय अहं की, भारतीय स्वत्वकी और भारतीय अर्थशास्त्रके ध्वस्तहुए गढ़की अजीब सूझबूझके साथ रक्षाकीहै ! भारतीय वैश्योंने विदेशीवस्त्रोंके इस व्यवसाय-व्यूहमें १८४० के आसपास प्रवेशकियाथा. ठीक ८० सालोंबाद, जब गांधीजीने १६२० में भारतीय स्वतंत्रताके अहिंसक युद्धकी बागडोर अपने हाथोंमें सम्हाली, उससमय इन्हीं भारतीय वैश्योंने, जो ८० सालोंसे विदेशीवस्त्रके व्यवसाय-व्यूहमें ही अपना एक मोर्चा लगायेबैठेथे, गांधीजीको उन्मुक्तहृदयसे आर्थिकसहायता देना प्रारंभकरदिया. भारतीय इतिहासकारोंको स्मरण रखना-चाहिए, कि केवल दससालोंकी थोड़ीसी अवधिमें, १६२० से १६३० तककी आजादीकी जद्दोजहदमें, लगभग १ करोड़ रुपया सारे-भारतमें यदि व्यय होसका और गांधीजीका अहिंसक आन्दोलन सफलतासे आगे बढ़ाया जासका, तो इसराशिका लगभग ७५ लाख रुपया इन्हीं भारतीय वस्त्र-व्यवसायी लोगोंने दियाथा, जो दृढ़संकल्पके साथ, विदेशीवस्त्रके व्यवसाय-व्यूहमें अपनी रहस्यमय रक्षाशक्ति लगाये, पिछले ८० सालोंसे अपनी दोतीन पीढ़ियां खपानेकेबाद भी, स्थिर बैठेहुएथे. भारतीय आजादीका यथार्थ इतिहास १६२० से नहीं, १८४० से प्रारंभहोताहै, पर उसे देखनेकेलिए सत्य भारतीय इतिहासका अणुवीक्षक यंत्र चाहिए और उसकेलिए भारतीय जीवनदर्शनमें प्रवीण शोधक इतिहासकार चाहिए !

कलकत्ताके विदेशीवस्त्रके व्यवसायकी कहानी अनेकानेक जटिलताओंसे भरी हुईहै. यह जटिलता दोप्रकारकी है. पहली जटिलता भारतीय व्यापारियोंकीहै, जिनमें बंगाली, खत्री और मारवाड़ी—इन तीन शक्तितत्वोंकी पारस्परिक व्यवसाय-परक प्रति-द्वन्द्विता है. दूसरी जटिलता विदेशी कम्पनियोंकीहै, जिनमें केवल ग्रेटब्रिटेनकी ही कम्पनियां नहीं थीं, अन्य विदेशोंकी कम्पनियां भी थीं. इन दो जटिलताओंके बीचमें भारतकी निर्धनताका अपना गणित भी मुखर रहाकरताथा, क्योंकि भारतकी प्रजाके पास क्रय-शक्ति बहुत ही क्षीण होचुकीथी. इस त्रिकोणी जटिलताओंके व्यूहचक्रमें प्रायः हरवर्ष पट्टपरिवर्तन हुआकरतेथे. विदेशी कम्पनियोंकी यह समस्या निरन्तर उग्र रहतीथी, कि उन्हें विश्वासपात्र बड़ेदलाल मिलें. बड़ेदलालोंका सबसे उग्र और जोखिमभरा दायित्व यह रहताथाकि वे ऐसे विश्वसनीय भारतीय व्यापारी प्राप्तकरें, जो उनसे विदेशीमालकी अधिकतम बिक्री करसकें और प्राप्त मालका अधिकतम रुपया ठीकसमयपर चुकानेकी क्षमतारखें. विदेशी कम्पनियोंके साहबोंकी अपनी जीवनचर्यां थी, भारतीय व्यापारियोंके अपने जीवन-ढरें थे. बंगाली और खत्री व्यवसाइयोंके पास धनका सुभीताथा, लेकिन राजस्थानसे आयेहुए मारवाड़ी व्यापारियों व व्यवसाइयोंके पास धनके नामपर शून्यथा. पर, इसशून्यके ऊपर आसन्दी या गद्दी लगाकर जब वे बैठते, अत्यधिक कर्मठता, आशातीत ईमानदारी और विलक्षण रीतिकी अर्थशास्त्रज्ञतासे वे उक्त त्रिकोणी जटिलताओं भरे कपड़ेके बाजारमें इतने ऊपर उठेहुए नजर आतेथे, कि सबकी नजर उनपर टिककर ही रहतीथी. विदेशी कम्पनियोंके साहबलोग यहांपर प्रतिद्वन्द्वितासे भराहुआ विदेशीवस्त्रका मार्केट सारेभारतके कोनेकोनेमें फैलादेना चाहतेथे. उस उत्कट सरगरमीमें उनकी नजर केवल उन व्यापारियोंपर ही टिकाकरतीथी, जो लाख-पचासहजार रुपयोंके हिसाबमें दक्ष हों, नकदीकी लेवा-बेचीमें प्रवीणहों, बियाज-बट्टेका हिसाब मुंहजबानी फलासकतेहों. कम मुनाफेसे संतोष-करनेवालाहो, पर अत्यधिक माल खपानेमें कुशल और नकदी पूंजीके हिसाब-किताबमें अहर्निश जागरण करनेवाला भी हो ! क्योंकि विदेशी कम्पनियोंका अहर्निश जागरण किसी भी भारतीय व्यापारीकी क्षणभरकी गफलतको या नादानीको तिरस्कारके साथ अस्वीकार करदिया करताथा, इसलिए उन्हें किसी भी भारतीय व्यापारीकी पलभरकी सुस्ती सह्य नहीं थी !!

मोहनलालजीका जन्म सन् १८४० के आसपास मण्डावामें हुआथा. आप जयकिशनदासजी के तृतीय पुत्रथे. आप १०

बरसकी आयुमें, सन् १८५० के आसपास, ४-५ मासकी कष्टकर यात्राके बलपर, सीधे कलकत्ता पहुंचगयेथे. ऐसा मानकर चलना होगा, कि आठ-दस महिनोंकी कड़ी मेहनतके बाद आपने 'मोहनलाल हीरानंद' नामसे कपड़ेकी दूकान करलीथी. भारतीय ग़दर १८५७ में हुआथा. इस पृष्ठभूमिमें, 'मोहनलाल हीरानंद' ग़दरसे पहले होगईथी, यह पारिवारिक स्मृति सहीथी.

कलकत्ताकी मंडी शुद्ध रूपसे अंग्रेजों द्वारा बसाईहुई वस्त्र-व्यवसायकी मंडी थी. भारतीय रुचि और भारतमें चलनेवाले खास-खास किस्मके कपड़े अब लंकाशायरके कारखानोंमें तैयारहोकर भारतमें आनेलगेथे. मोटा और महीन, सभी श्रेणीके वस्त्रोंमेंसे कौनसा माल भारतके किस इलाकेमें खपसकताहै, इसका बड़ा अध्ययन जिसे हो, वही भारतीय बड़ी लेवा-बेचीमें दोचार कदम आगे बढ़सकताथा. पर अपनी दूकानपर जमकर वही बैठसकताथा, जो खास-खास विलायती कम्पनियोंके साहबोंकी निगाहमें चढ़नेका व्यावसायिक कौशल करदिखाये. मोहनलालजी एक तरहसे नाथूरामजीके भतीजेथे, और आयुमें उनके पुत्रके समानथे. नाथूरामजीने जहां मंडावाके अन्य भाईयोंको सूतापट्टीमें बसानेका वरद् कर्मकिया, वहीं मोहनलालजीको अपने हृदयका आशीर्वाद भी दिया, यह माननेलेनाहोगा. सूतापट्टी वस्त्र-व्यवसायका वह मान्य बाजारथा, जहांपर मान्यता-प्राप्त व्यापारीही अपनी दूकान लगासकताथा. शत-शत असह्य स्थितियां, उलझीहुई आर्थिक परिस्थितियां, अंग्रेज साहबोंकी भृकुटियां और कृपा-कटाक्ष, इन सबकेबीचमें जो स्थिर-मतिरहे, वही सूतापट्टीकी महारत और शोहरत हासिल करसकताथा.

ऐसीही चुनौतियोंसे भरीहुई स्थितियोंमें मंडावाके सराफ-वंशमें, जबतक नाथूरामजी सराफ वापस मंडावामें जाकर विश्रामका जीवन जीनेलगे, उससे पहले ही कलकत्तामें इसी सराफ-वंशके मोहनलालजी सराफने अनेकरूपाय बुद्धिकौशल और व्यावसायिक पटुताके बलपर, सूतापट्टीके कपड़ेके बाजारमें १८५५ के आसपास 'मोहनलाल हीरानंद' फर्म स्थापितकरदीथी. गोयेनकाओंके पास रैली ब्रदर्सकी बेनियनशिप सन् १८८० के आसपास आई[1], इसलिए यह निःसंकोच कहाजासकताहै, कि इस १८८० से पहले 'मोहनलाल हीरानंद' ने अन्यान्य विदेशीवस्त्रोंकी कम्पनियोंका मालभी बेचाहोगा ; पर १८८० के बाद, वे रैलीब्रदर्ससे लियाहुआ वस्त्र बड़ेपैमानेपर बिक्री करनेलगेथे और इसीके बाद 'मोहनलाल हीरानंद', कलकत्ताकी सुप्रतिष्ठित और अग्रणी फर्मोंमें से, लोक-कीर्तिप्राप्त एक ऐसी आसन्दी होगईथी, जिसपर सूतापट्टीमें प्रवेशकरतेही सबसे पहली नजरपड़तीथी.

*** *** ***

सन् १८८० से पहलेका कोई इतिवृत्त इस प्रतिष्ठानका हाथ नहींलगता. हमें एक अतिदुर्लभ सूत्र सर बद्रीदासजी गोयनका की आत्मकथामें पृष्ठ ४३ पर मात्र इतनामिलताहै, "सराफ-परिवारमें मोहनलालजीका मेलजोल पिताजी(सेठ रामचन्द्रजी गोयनका)से काफी अच्छाथा." इस सूत्रको विशद और प्रशस्त बनानेकेलिए हमने २५ मई १९८२ को श्रीईश्वरीप्रसादजी गोयेनकासे एक साक्षात्कारकिया और उनका वाणी-अंकनकिया. आपने उदात्तभावसे 'मोहनलाल हीरानंद' फर्मके विलुप्तसूत्रोंको एक रोशनीदी. आपनेकहा, "यह बात सत्यहैकि रैलीब्रदर्सके बड़ेसे बड़े डीलर ये ही थे. फिर जैसे-जैसे ये आपसमें पृथक होतेगये, उसमें भाग होता-गया. जबतक यह दुकान 'मोहनलाल हीरानंद' बड़ीरही, तो हरिरामजी[2] एक बार उस दुकानपर जरूर जातेथे. हमारे पिताजी[3] जातेथे. मैं तो रोजही जाताथा. बद्रीदासजी नहीं गये, होली-दिवाली वे भले ही चलेगयेहोंगे, यों नहीं गये. ऐसाहैकि पहले हरिरामजी ही जायाकरतेथे. फिर हमारे पिताजी जानेलगेथे. फिर मैं जानेलगा. उसकी बात योंहैकि जब मैंने काम शुरू किया, तो इनकी दुकानपर जाता, इनको प्रणामकरता, इनका आशीर्वाद लेता, तब आगे बढ़ता. बचपनकी याद पड़तीहै, रामरिक्षपालजी झुंनझुनवाला, रतनलालजी बोथरा, बिशेशरदासजी गोयेनका, और शिवदासजी गोयेनका—ये चारों ऐसे थे, कि वहाँ जाकरके, उनका आशीर्वाद लेकरके, फिर आगे हमलोग अपने काममें लगतेथे.

"मोहनलालजीके नेत्रोंकी ज्योति जानेकेबादसे, वे सबसे बातकरतेथे, बैठे रहतेथे, लेकिन अन्दरही अन्दर उन्हें रहताथाकि कब भगवान उन्हें जल्दी उठालें. वे नजर जानेकेबाद भी, सबको बोलीसे पहचान लेतेथे. पर अन्दरकी मेधा उनकी वैसीही बनी-रहीथी. उनके व्यावसायिक वर्चस्वमें एक बात खास यह थीकि उनको आगेकी सूझ बहुतरहतीथी. वे भविष्यको देख लेतेथेकि अब बाजार किस तरफ जानेवालाहै. किसतरहसे रहनेवालाहै. उनकी यह बहुतही विशेषताथी. यह बात उनके और भाईयोंमेंभी थी, पर मोहनलालजीके कहनेके मुताबिक. वे आपसमें तीनों बात करलेते, पर उनका विचार मोहनलालजीकी कहीहुई बातके अनुसारही काम करताथा.

" 'मोहनलाल हीरानंद' रैलीब्रदर्सके एक नम्बरके डीलर थे. यहाँपर यह कहनेमें कोई संकोच नहींहैकि रैलीब्रदर्सके साहबलोग भी मोहनलालजीसे सलाह लियाकरतेथे. वे कभी भारतीयोंकी दुकानपर नहीं आतेथे, हमीं लोगोंको ही उनकेपास जाना पड़ताथा.

१ 'मेरे संस्मरण,' बद्रीदास गोयनका, पृष्ठ ८.

२ सेठ रामचन्द्रजी गोयेनकाके ज्येष्ठ सुपुत्र सर हरिरामजी गोयेनका.

३ श्रीहरिरामजी गोयेनकाके कनिष्ठ भ्राता श्रीघनश्यामदासजी गोयेनका.

उनका हुकुम रहताथाकि अमुकको बुलाओ. उससमयके एक साहब मिस्टर ऐवीनौट थे. वे ग्रीक थे. मैनचेस्टरके साहब लोग, जो रैलीको कंट्रोल करतेथे, भी बीचबीचमें भारत आतेथे. यहाँके साहब लोग रैलीकी सर्विस करतेथे. जब कंट्रोल करनेवाले साहब भारत आते, तो यहाँके व्यापारियोंसे मिलते, उनसे बातकरते, उनसे पूछते, उनकी राय जानते. क्योंकि वे हिन्दी जानते नहींथे, इसलिए उनको अंग्रेजीमें अनुवादकरके बतलायाजाता. पर जो साहब लोग यहाँ सर्विसकरते, वे थोड़ाबहुत हिन्दी समझ जायाकरते. हमारे पिताजी अंग्रेजी नहीं जानतेथे. कुछ थोड़ी अंग्रेजी, कुछ हिन्दी, इसतरह वे अपना काम निकाल लियाकरतेथे. मतबल यह हैकि बिजनेसका प्वाइंट समझ लेना. समझादेना. जैसे कोई माल आया, और उसमें खराबी आगई. यहाँ उसपर कम्पेन्सेशन देना पड़ता. उसीको बट्टा कहतेहैं. हम लोग इसविषयमें अपनी राय नहींबनाते, साहबोंसे राय मिलाकर, आपसरीमें तय करतेकि इसमें कितना बट्टा होनाचाहिए. साहबलोग भी ऐसा नहीं समझतेकि ये लोग कोई दूसरेहैं. और हमलोग भी उनको याने व्यापारियोंको नहीं घबरातेकि अपना दांव लेलें और उनके हितोंको न देखें. सरल भाषामें कहेंकि आपसमें इतना विश्वास, इतना समर्थन और सबका सम्मान, कि कोई यह नहीं सोचनेका मौका पाताकि हमारी कोई क्षति होगी, ऐसा होनेसे.

"पहले संबंध हमारे दादाजी रामचन्द्रजीका मोहनलालजी और आनंदरामजीसे रहाहै. हरिबक्सजीको मैंने देखाहै. मोहनलाल, हीरानंद और हरिबक्स—ये तीन शाखाओंके नाम थे. पहलेतो ये सूतापट्टीमें रहतेथे. एकमें तो मोहनलालजी और उनका परिवार, एकमें आनंदरामजी और तीसरेमें हरिबक्सजी.

"हमलोगोंका सम्बन्धहुआ रैलीब्रदर्सको लेकरके. हमारे सबसेबड़े डीलर ये हीथे, 'मोहनलाल हीरानंद' नाम पड़ता. तब इनका सारा परिवार ज्वाइंट में था. हम लोग रैलीब्रदर्सके बेनियनथे. उसकेबाद 'मोहनलाल हीरानंद' नैनसुखके सबसे बड़े डीलर हुए. हरिरामजीसे लक्ष्मीनारायणजीका तो जैसे पिता-पुत्र का सम्बन्धथा. फिर लक्ष्मीनारायणजी और ओंकारमलजीका मेरे पिताजी घनश्यामदासजी और बद्रीदासजीसे बहुतअधिक संबंध होगयाथा. आनंदरामजी बाबाजी बहुत दफे आते. सेवारामजी बहुतदिनोंतक 'विधवा सहायक संघ' के सेक्रेटरी रहेथे. उन्हें 'हार्ट' की बीमारी होगई, लेकिन जब भी वे आते, उनसे हम लोग नीचे आकर मिलते. वे ऊपर सीढ़ी नहीं चढ़ते. यह 'विधवा सहायक संघ' १९०० में स्थापित होगयाथा. यह भी हमारे दादाजीका कियाहुआहै. उसवक्तसे यह चलरहाहै.

"अब हमारा-परिवार और इनका परिवार, यह थाकि जैसे कोई पारिवारिक संबंध है ; पारिवारिक सम्बन्ध भी ऐसाकि ताऊ-चाचा, बेटा-पोता. ऐसा नहींकि यह कोई दूसरा परिवार है, और हम लोग कोई दूसरे परिवारहैं. बराबर मिलना, रोज मिलना, शनिवार-रविवारको बगीचे जाना. इसतरह सबका परस्परमें पूरा सौहार्द्र."

बालचन्दजी मोदीने अपने ग्रंथके पृष्ठ ५१६ पर 'मोहनलाल हीरानन्द' का जो संक्षिप्त नोटदियाहै, उसमें ऊपरके दोनों वक्तव्योंका जैसे संपुट लगातेहुए, यह स्तुत्य वाक्य विशेषरूपसे लिखाहै, "इस फर्मने केवल कपड़ेकी एकदुकानसे बड़ेबड़ेकाम किये और समाजमें श्लाघ्नीय स्थान प्राप्तकिया."

ऊर्जस्वल मोहनलालजी सराफ, ब्रिटिश साम्राज्यका आर्थिक व्यूहचक्र, अनेक कठिन परीक्षाएँ

सचमुच मोहनलालजीकी कहानी एक विस्तार मांगतीहै. वे ऊर्जस्वल थे. सरल अर्थ है कि वे श्रेष्ठ स्तरके मेधावान व्यवसायीथे और उत्तम सद्गुणोंके आगारथे. जिससमय सूतापट्टीमें लगभग ५०-५१ फर्में धनाढ्यावस्थाको पहुँचचुकीथीं, कपड़ेके बाजारपर इनकी फर्म अपना शासन करनेलगीथी. उससमय भी मोहनलालजीने अपनी बुलंद हस्तीको मर्यादाशील रखतेहुए, अत्यंत संयमके साथ, रैलीब्रदर्सके क्लौथ डिपार्टमेंटके बेनियन सेठ रामचन्द्रजी गोयेनकाके सहयोगको ही अर्थवान बनाकर रखाथा. यह बात तो निश्चयही १८८० के बादकी है. पर उससे पहले, रैली ब्रदर्स और अन्य विदेशी कम्पनियोंके साहबोंके द्वारा रचित आर्थिक व्यूहचक्रोंमें वे सदा ही एक धुरंधर वस्त्र-व्यवसायीके रूपमें सतत प्रशंसाएँ प्राप्त करतेरहेथे. पहले १८५७ का भारतीय ग़दर आया, उसके बाद, ईस्ट इंडिया कम्पनीका राज गया और ब्रिटिश क्राऊनका राज आया. उसके बाद १८७० के आसपास 'अमरीकी कौटन वार' चला. और, भारतके विदेशी वस्त्र-व्यवसायमें भयंकर उथलपुथल ऐसी आईकि लोग रातोंरात लखपती भी हुए और देखतेदेखते 'धूलमिट्टी आदमी भर' भी बनगये ! धीरेधीरे भारतीय रुपयेका मूल्य घटतागया, भारतीयोंकी क्रय-शक्ति भी घटतीगई. यदि हम इसबातकी खोज करपायेंकि सन् १८३०-४० के बीच कलकत्तामें कितनी भारतीय फर्में विदेशीवस्त्रका कारबार करतीथीं और उनमें १९०० तक कितनी शेषरहीं, तो वह औसत बहुतही चिंतनीय रूपसे हृत्कम्प करनेवालाहोगा. लोग इस व्यवसायमें भाग्य आजमाने आतेरहे, जातेरहे. केवल १० प्रतिशत फर्में ही १९०० तक स्थायी कीर्तिकी अधिकारी बनसकीं. ऐसी स्थायीकीर्तिके स्वनामधन्य एक मोहनलालजी सराफ इसलिए रहे, क्योंकि वे स्थिरमति व्यवसायके स्थिर धनागममें विश्वासलेकर दृढ़रहे. इसीलिए एकबार ईश्वरदासजी जालानने कहाथाकि १९वींसदीके उत्तरार्द्धमें जिन मारवाड़ी सेठोंपर पूरे मारवाड़ीसमाजकी प्रतिष्ठा बेलाग रहीथी और जिनकी वजहसे उसपर कोई आंच नहीं आनेपाईथी, उनमें एक मोहनलालजी सराफ रहे. उनका नाम उधर गोरखपुर और दक्षिणमें बम्बई तक इसलिए जानाजाताथा, क्योंकि वे आदर्श व्यवसायके पुरुष थे. श्रीरामदेव चोखानीने, जैसे

इस वक्तव्यको और भी सारगर्भित बनादियाहो, कहा, "मोहनलालजी लंकाशायरके कारखानोंमें जो नीति निर्धारित कीजानेवाली होतीथी, उसकी आहट पहले ही पालेतेथे और भारतके बाजारोंमें उस नीतिका क्या प्रभाव पड़ेगा, इसका गणित पहलेसे फलाकर रखतेथे. यही वजहहै, मोहनलालजीने कभी घाटा नहीं सहा और कभी उन्होंने बाजारसे रुपया नहींलिया. वे वैश्योंमें महाजन थे और महाजनोंमें देव-हृदय तुल्य सात्विक पुरुष थे."

हम कहतेहैं, उनका प्रताप पुण्य-मय रहा. उनका अर्जित धन भगवानका दियाहुआ रहा. उनके परिवारमें जो लक्ष्मी आई, वे दैवी लक्ष्मीथीं. वे दूसरोंसे प्राप्त उपकारोंको आगे रखतेथे, अपने द्वारा प्रदत्त उपकारको सदाही छिपादिया करतेथे.

मोहनलालजीके धर्मसे ओतप्रोत व्यापारमें उनके ज्येष्ठ सुपुत्र लक्ष्मीनारायणजीका श्रेय कम नहीं रहा. पर, उससे ज्यादा, बड़ीबात यह रहीकि ज्यों-ज्यों धन आतागया, उन्होंने अपने संयुक्त परिवारको अपनी दोनों बांहोंमें गाढ़े कसकर रखा. जब सूतापट्टीमें मोहनलालजीने अपनी कोठी बनवाई, तो उसके संगसाथ ही हीरानन्दजीके पुत्रोंकी कोठी भी बनवाई. फर्ममें हीरानन्दजीसे छोटेभाई चतुर्भुजजीका भी साझा रहा. चतुर्भुजजीका देहान्त, एक पुत्र हरिबक्सजीके जन्मके बाद, बहुत पहले होचुकाथा. तो, तीसरी कोठी इन्हीं हरिबक्सजीकी बनवाईगई. इससे पहले सभी भाईयोंका विवाह और उसके बाद इनके पुत्रोंका विवाह भी फर्मके साझे व्यवसायके अन्तर्गतही कियागया. तीन कोठियां और सबके भरेपूरे परिवार, तो ये तीन कोठियां सूतापट्टीमें मंडावाके सराफ-वंशकी ध्वजाएं मानीगई. नाथूरामजीने मंडावाके सराफोंको बुलाकर सूतापट्टीमें कपड़ेकी दूकानें करवादीथीं. मोहनलालजीने अपने पौरुषकी सामर्थ्यलेकर, सूतापट्टीमें यह मान्यता सार्थक करदीकि आधी सूतापट्टी मंडावाके सराफोंकी है. 'मोहनलाल हीरानन्द' फर्ममें अपने दोभाईयोंके पुत्रोंको लेकर मोहनलालजी बहुसक्षम और बहु-हस्त कर्म-रथी बनचुकेथे. हीरानन्दजीका देहान्त सन् १८८३ में होगयाथा. पर फर्मका नाम पूर्ववत् रहा. फर्ममें हीरानन्दजीके दोपुत्रोंका हिस्सा बनारहा. यह नाम १९१३-१४ तक स्थिररहा. मोहनलालजी ऐसेही सत्यसंकल्पोंके संत रहेथे...

छप्पणियाका अकाल, मोहनलालजी सराफकी निरंतर यादरहनेवाली अकाल-सेवाएं

छप्पणिया याने संवत १९५६, तदनुसार १८९९. इसवर्ष राजस्थानके उत्तर-पूरबी अंचलोंमें और समग्र हरियाणामें तथा देशके निकटवर्ती अन्य अंचलोंमें इतना बड़ा दुर्भिक्ष आयाथा, कि उसमें लगभग एकलाखसे ऊपर व्यक्ति भुखमरीसे होम होगयेथे. बाकी जो नुकसानहुआ, वह सीमातीत रूपमें हुआथा. भारतमें १८वीं और १९वीं सदीमें लगभग ११ अकाल भयावह स्तरके आयेहैं, उनमें छप्पणिया अकाल जैसे अपनी विभीषिकाओंकी दारुण गाथा पूरी २०वींसदीकेलिए छोड़ गयाहै. इस अकालमें लोगोंने अपने ८-८ सालके बच्चोंको केवल दोरोटियोंके एवजमें बेचदियाथा और अनेक वंशोंका खात्मा फुटपाथोंपर या ग्रामोंके अज्ञात बीहड़ोंमें होगयाथा...

सरकारीस्तरपर ब्रिटिश सरकारने या देशी रियासतोंने इस अकालके राहत कार्योंकेलिए क्या कारगर उपायकिये, उस-विषयमें कुछ खोजतलाश करनेपर निराशाही हाथलगेगी. राजस्थानके उन मानवात्मा-प्रिय सेठोंने, जिन्होंने कलकत्ता और बम्बईमें अच्छा धनार्जन करलियाथा, वे अवश्य आड़ेवक्त आगे आये. इस वक्त रैलीब्रदर्सके गोयेनकाओंने डूंडलोदमें एक उल्लेखनीय काम किया. पर हम यहांपर केवल 'मोहनलाल हीरानन्द' फर्मकी ओरसे जो कामहुआ, उसका प्राप्त विवरण प्रस्तुतकररहेहैं ; इस विवरणमें किसीप्रकारका आडम्बर नहींहै गंभीर चिन्तनके साथ, एक व्यवस्थाको तरतीबदेतेहुए अकाल-पीड़ितोंकी इसरीतिसे सेवा कीगईथी, मानो वे मंडावाग्रामके आत्मीय अतिथि हैं ! ऐसी अकालसेवा एकदो दिन नहीं, कई महीनोंतक कीगई. और, फिर यह तथ्य स्मरणकरके हमें यह अकाल-सेवा समझनीचाहिए, कि गरीबीसे निकलकर मोहनलालजी कलकत्तागयेथे. ५० सालोंमें उन्होंने जो धन कमायाथा, उस पवित्र लक्ष्मी-प्रदत्त धनमेंसे उन्होंने इस मानवीय सेवाकेलिए धनाधारित नियोजनकियाथा.

मोहनलाल हीरानन्द फर्मकी ओरसे मंडावामें आनेवाले अकाल-पीड़ितोंको प्रति व्यक्ति एकसेर अनाज और मिर्चमसालोंके लिए चारपैसे दियेजातेथे. गांवके बाहर उनके स्थायीनिवासके लिए सरकंडोंकी झोंपड़ियां डलवादीगईथीं. जो पशु इस अकालकी चपेट में आयेथे, उनकेलिए पेयजल और चारेकी प्रचुर व्यवस्था करदीगईथी. तम्बू भी लगवा दियेगयेथे. अधिकतर तो ऐसा होताथाकि गांवसे ही रोटियां सिकवाकर और गाड़ेमें रखवाकर उन पीड़ितोंके झोंपड़ोंतक भिजवानेका इंतजाम रहताथा. गांवमें सराफोंका जो मुनीमथा, वह सबको अपनेसामने रोटियां परोसकर आताथा और उनकी तात्कालिक आवश्यकताएं क्याहैं, इसकी जानकारी स्वयं लेताथा. एक बड़ी व्यवस्था संयोजितकरतेहुए, मोहनलालजीने बहुतसे भाईयोंको अनाजकी बोरियां भीदीं, और कहाकि जब जिसके पास पैसे आवें, तो वे देदें, वरना पैसे देनेहैं, इसकी कोई आवश्यकता भी नहींहै. मंडावाके लोगोंपर भी इस अकालकी छायापड़ीथी, बहुतसे असहायपरिवार ऐसे दुखद संकटकेसमय अनाजको तरसरहेथे. उनकेलिए ही इन बोरियोंका प्रबंध कियागयाथा. यह अकाल-सेवा काफी दिनोंतक चली. मंडावामें इस राहतकार्यकी लम्बी गाथायें सुननेको मिलतीहैं. जबतक सेवाकार्य चलतारहा, कलकत्तामें बैठकर, मोहनलालजीने बराबर इस कार्यसे अपना सम्पर्क साधकर रखाथा. आपकी दृष्टि इससमयतक प्रायः-प्रायः जाती रहीथी, इसलिए आप यात्राकरनेमें असमर्थथे. पर आपकी सेठाणीजी अवश्य मंडावा पहुंचगईथीं और अपनी निजी देखरेखमें रसोई-पानी आदिका बंदोबस्त करवातीरहतीथीं.

ऐसेही दिन बीतरहेथे, कि एक दिन मोहनलालजीकी सेठाणीने यह ध्यान दियाकि अबतो सावनका महीना आगयाहै. और जैसेही तीजका दिन आया, उसकेलिए उन्होंने खास तैयारीकी. कहनेलगींकि ये लोग क्या आज भी रोटियांही खायेंगे ? तब उन्होंने कढ़ाहा भरवाकर चावल बनवाये और उसदिन अकाल-पीड़ितोंको वही खिलायागया. स्त्रियोंको आज उन्होंने प्रति स्त्री कंघी, नाल और मेंहदी दी. राजस्थानमें तीजकेदिन स्त्रियोंकेलिए इन वस्तुओंका विशेषमहत्व रहताहै और इन वस्तुओंका इसदिन दानदेना बहुत ही शुभ और श्रेयष्कर मानाजाताहै.

अकाल-राहत अनेकानेक चिंतनीय पहलुओंका समाधान चाहताहै. अकालने बिन सूचना दिये श्रमिकवर्गको बेकार करदियाथा और उन्हें मजदूरी नं मिलनेकेकारण भुखमरीका सामना करना पड़रहाथा. पुत्रोंके साथ और भतीजोंके साथ मिलकर मोहनलालजीने इस मामलेमें स्तुत्य निर्णयलिया. काफी बरसोंपहले परिवारजनोंकी ओरसे मंडावाके आसपास जमीनें लेलीगईथीं; तो व्यक्तिगत स्तरपर मोहनलाजीके परिवारकी ओरसे, हरिबक्सजीके परिवारकी ओरसे और हीरानन्दजीके पुत्रोंकी ओरसे इन जमीनोंपर कुएं खुदवायेगये और धर्मशाला आदिका निर्माण शुरू करवादियागया, ताकि मजदूरोंको रोजीमिले और उनके जीवनकीभी रक्षा इस अकालके दौरमें संभव कीजासके. मोहनलालजीका, सीकर ठिकाणेके नीचे, एक गांवथा सधीणसर और मंडावाके नीचेथा नवंदी, इन दोनों गांवोंमें और साझेका तीसरा गांवथा कुहाड़, वहांपर कुएं खुदवानेका काम शुरू कियागया.

अकाल सामूहिक रूपसे मनुजोंका भक्षणकरताहै और पशु व अन्यान्य सम्पत्तिका क्षयकरताहै. अपने ग्रामविशेष मंडावामें मोहनलालजीने अपने परिवार और अपने फर्मकी अर्थ-सक्षमताको बटोरकर इस सामूहिक भक्षण और क्षयकी विभीषिकाका प्रसार बहुत अंशोंतक विस्तृत नहीं होनेदियाथा. यह इसीलिए, कि उनके पास सत्य धनकी देवोपम शक्तिथी.

पुत्र-प्राप्तिकी मनोकामनाकी दीर्घ साधना, उत्तम संततिके कुलीन वैवाहिक सम्बन्ध

आर्य-कुलमें ६ फुटी मनुजोंकी परम्परा इस देशमें विगत ५००० सालोंसे अधिककी रहीहै. १९वींसदीके अन्ततक राजस्थानमें ऐसे कद्दावर ६ फुटी दर्शनीय मनुजोंकी औसत संख्या ७० प्रतिशतथी. नाथूरामजी ऐसे ही कद्दावर मनुजथे. मोहनलालजी भी ६ फुटके दबंग व्यक्तित्ववाले पुरुष रहेथे. १८६५से १९००के बीचका उनका एक चित्र हमने देखाहै. बैठेहुए भी उनका काया-सौष्ठव टांकीसे शिल्पित हुआहो, ऐसा मनोरम रहा. मंडावाके सराफ-वंशमें प्रायः पुरुषवर्ग गौर-वर्ण रहाहै. मोहनलालजी अतिगौरवर्णी रहे. उससे पता चलताहैकि उनकी माता कितनी रूपवती रहीहोंगी !

हम गाथाक्रमको रोककर, क्रमवार तिथियोंकी सूची लेतेहैं. यह सन् १८५३ से १९१७ तकका उत्कीर्ण कियाहुआ वह जीवनहै, जिसमें मोहनलालजीका पारिवारिक जीवन लिपिबद्ध ही हुआ नहीं मिलता, पुत्र-प्राप्तिकी मनोकामनाकी संपूर्तिके लिए उन्होंने कितनी दीर्घ साधना की, इसका भी विवरण स्वतः हाथ लगजाताहै. शेष तिथियोंमें उन्होंने अपने कौन-कौनसे पारिवारिक दायित्व पूरेकिये, इसका विवरणहै.

सन् १८४० : मंडावामें सेठ जयकिशनदासजीके ज्येष्ठ सुपुत्रके रूपमें मोहनलालजी सराफका जन्म.

सन् १८५३ : मंडावामें ही १३ बरसकी आयुमें मोहनलालजीका पहला विवाह सम्पन्न. इसी विवाहके बाद, वे पूरे छः मासका यात्रा-कष्ट उठातेहुए, ऊँटोंकी मुसाफरी, नौकाकी यात्राएं, इन उपायोंसे १८५४ में कलकत्ता पहुंचेथे.

सन् १८६५-६६ : मोहनलालजीकी पहली पत्नी निःसन्तानावस्थामें निधनको प्राप्त ; अतः मोहनलालजीने २६-२७ वर्षकी आयुमें द्वितीय विवाहकिया.

सन् १८७० : मोहनलालजीके पहले पुत्र, इस द्वितीय पत्नीसे, लक्ष्मीनारायणजीका जन्म. इससमय मोहनलालजीकी आयु ३० बरस होचुकीथी.

सन् १८७३-७४ : मोहनलालजीको एक सुकन्या लक्ष्मीबाई प्राप्त हुई.

सन् १८७६-७७ : मोहनलालजीकी द्वितीय पत्नीका निधन; मोहनलालजीने ३७ बरसकी आयुमें तृतीयविवाह किया. यह तृतीयविवाह इस विशेषकारणसे किया, कि अत्यधिक शारीरिक श्रम और देरराततक बहीखातोंको जांचने-देखनेका कष्ट करते रहनेके-कारण, उनकी नेत्रज्योति क्षीण पड़चुकीथी. उधर रैलीब्रदर्स द्वारा मोहनलाल हीरानन्दको अपने विश्वासमें लेनेके कारण, वस्त्र-व्यवसायकी सक्रियतामें बहुत तेजी आगईथी. ऐसीस्थितिमें गृहलक्ष्मीका आलोक घरमें चाहिए ही चाहिएथा. यह तृतीय पत्नी मंडावाके ही क्याल-वंशकी सुकन्याथी, नामथा सुन्दरबाई.

सन् १८७९ : श्रीहीरानन्दजी सराफकी विधवा पत्नीका देहांत ; ये आनन्दराम व सेवारामकी सौभाग्यशाली माताथीं.

सन् १८८० : तृतीय पत्नीसे मोहनलालजीके द्वितीय पुत्र ओंकारमलजीका जन्म.

सन् १८८३-८४ : लक्ष्मीनारायणजीका पहला विवाह संपन्न. इस प्रथम प्रत्नीका नाम जमनाबाईथा.

सन् १८८३-८४ : मोहनलालजीकी दूसरी कन्या श्योदीबाईका जन्म.

सन् १८८५ : लक्ष्मीनारायणजीकी प्रथमपत्नीसे एक कन्याका जन्म.

सन् १८८६ : लक्ष्मीनारायणजीकी प्रथमपत्नीका देहान्त; द्वितीयविवाह सम्पन्न. इस पत्नीका नाम जड़ावबाईथा.

सन् १८८६ : मोहनलालजीकी पहली कन्या लक्ष्मीबाईका विवाह पूर्ण हुआ.

सन् १८७७ : मोहनलालजीकी तृतीय कन्या राधाबाईका जन्म.

सन् १८८७-८८ : लक्ष्मीनारायणजीकी द्वितीय पत्नीसे एक पुत्रका जन्म. इसका देहान्त जन्मके बादही होगया.

सन् १८९० : मोहनलालजीकी चतुर्थ कन्या पानाबाईका जन्म.

सन् १८९१-९२ : लक्ष्मीनारायणजीकी द्वितीय पत्नीसे एक पुत्रका जन्म. इसका नाम चण्डीप्रसाद रखागया. इस पुत्रने अल्प जीवन धारणकिया.

सन् १८९२-९३ : तृतीय पत्नीसे मोहनलालजीके द्वितीय पुत्र ओंकारमलजीका जन्म.

सन् १८९३-९४ : मोहनलालजीकी दूसरी कन्या श्योदीबाईका विवाह धर्मचन्दजी रानीवालाके साथ हुआ. यह रानीवाला परिवार बहुत धनाढ्य परिवारथा.

सन् १८९४-९५ : लक्ष्मीनारायणजीको एक कन्या प्राप्तहुई, पर इसकेबाद द्वितीयपत्नीका निधनहोगया. तृतीयविवाह सम्पन्न. इसका नाम पार्वतीबाईथा.

सन् १८९७ : लक्ष्मीनारायणजीकी तृतीय पत्नीने एक पुत्रको जन्मदिया.

सन् १९०० : मोहनलालजीकी तृतीय सुकन्या राधाबाईका विवाह संपन्न.

सन् १९०३ : मोहनलालजीकी चतुर्थ कन्या पानाबाईका विवाह संपन्न. वर दुलीचन्दजीकी बरात बरारके धामनगांवसे आईथी.

सन् १९०३-४ : लक्ष्मीनारायणजीकी तृतीय पत्नीने एक कन्याको जन्मदिया. इस प्रसवकेबाद पत्नी अति रुग्ण होगई और १९०५ के शुरू होतेही इस तृतीयपत्नीका निधनहोगया.

सन् १९०५ : ओंकारमलजीका विवाह बासंतीदेवीसे संम्पन्न.

सन् १९०६ : लक्ष्मीनारायणजीने अपना चतुर्थविवाह ३६ वर्षकी आयुमें विधिवत् पूर्णकिया. सीकरनिवासी हरदेवदासजी जालानकी सुकन्या बादामीदेवीसे यह विवाह संपन्नहुआ.

१८९५ से १९०६ : मोहनलालजीकी नेत्र-दृष्टि न्यूनसे न्यून होतीगई और पूरीतरहसे जब नेत्रोंकी ज्योति चलीगई, तो उनकी गृहलक्ष्मीही उनकी यथार्थ जीवन-ज्योति बनीरही. ये ही उनके जीवनमें, अंतिम चरणमें, परम वरदान बनकर रहीं. इसी गृहलक्ष्मीकी देखरेखमें वे दानधर्म, संततिके विवाहादि, व्रत-पूजा समारोह करतेरहनेकी मनस्तुष्टि प्राप्तकरते रहे. सत्यवस्तुस्थिति यहीथीकि परिवारकी चौखटके अन्दर ये गृहलक्ष्मी ही उनकी प्राणज्योति बनीरहीथीं.

सन् १९१३ : मोहनलालजीने उदात्तभावसे और पितृस्थानीय बनकर, मोहनलाल हीरानंद फर्मका बंटवाराकिया. हीरानंदजीके सुपुत्रों को और हरिबक्सजीको यथोचित अंश इस बंटवारेमें प्रदानकिया. इस विभाजनसे परिवारमें सभीको अतीव संतोष रहा और समाजमें यह बंटवारा एक आदर्श दृष्टांत मानागया.

सन् १९१४ : मोहनलालजीकी गृहलक्ष्मी सुन्दरदेवीका ५० वर्षकी आयुमें निधन.

सन् १९१४ : ओंकारमलजीके प्रथम पुत्र मदनलालका जन्म.

सन् १९१५-१६ : ओंकारमलजीके द्वितीयपुत्र ईश्वरीप्रसादका जन्म.

सन् १९१७ : ओंकारमलजीके तृतीय पुत्र माधोप्रसादका जन्म.

सन् १९१७ : मोहनलालजीकी इहलीला ७७ वर्षकी दीर्घ आयुमें पूर्णहुई. उनका यशःशरीर पंचतत्वमें विलीनहुआ. यह निधन कलकत्तामें कार्तिक सुदी दूजको हुआ. इससे पूर्व, मार्गशीर्ष कृष्णाके दिन लक्ष्मीनारायणजीकी चतुर्थपत्नीने एक पुत्रको जन्म दियाथा.

* * * * * * * * *

मानुषी कायामें हृदय, शुद्ध रक्तको धमनियों द्वारा सारे शरीरके अंग-प्रत्यंगोंमें पहुँचाताहै. नाड़ियों द्वारा अशुद्ध रक्त वापस हृदयमें स्वतः पहुँचजाताहै. यही प्राण-स्पंदन कहलाताहै. मानुषी परिवारमें शुद्ध रक्त और अशुद्ध रक्तके स्थानपर नव-संततियोंका प्रसव और पुत्रियोंके विवाहमें उनका दूसरे परिवारोंमें प्रत्यारोपण कहलाताहै. शुद्ध रक्तके रूपमें ही नई कुललक्ष्मियोंका स्वागत-आगमन होताहै. परिवारके मुखिया बनकर मोहनलालजी, हृदय स्थानीय पितामह बनकर, स्थितप्रज्ञ बनेरहेथे. १९१७ में वे अपने सभी सामाजिक दायित्व पूरे करचुकेथे. अपनी फर्म 'मोहनलाल हीरानंदका' अंशांश अपनी दूसरीपीढ़ीको उत्तराधिकारमें समर्पित करचुकेथे. अब वे जीवन-निर्मुक्त थे. प्रभुने उनको अपनी दैवीज्योतिके धाममें वापस बुलालिया······

रंगोंसे झिलमिल, सत्कीर्तिसे बहुमूल्य, स्फटिक-मणिसे निःसृतहोनेवाली सूर्य-किरणोंसे लिखागया उपसंहार

बड़ा व्यवसाय, बड़े धनाढ्य सेठ, बड़ी अचल सम्पत्ति, बड़े संभ्रान्त लोगोंसे मैत्री-भाव, बड़े संभ्रान्त परिवारोंमें वैवाहिक कुल-रिश्ते, मोहनलालजी मात्र इतने भरकी परिधिके वंदनीय पुरुष नहीं थे. उनके जीवनकी बहुतसी घटनायें ऐसीहैं, जिनको पढ़कर अतीव आनंद प्राप्तहोताहै. मोहनलालजीका गाथा-प्रसंग समाप्तकरनेसे पहले, हम कुछ चुनेहुए संस्मरण यहां एक सीधीरेखामें रखनाचाहेंगे. हमें पहला संस्मरण मंडावाग्राममें कीगई उनकी सार्वजनिक सेवाओंकेबारेमें मिलाहै, महामारियोंके सार्वजनिक प्रकोपके संबंधमें है. प्रस्तुत ग्रंथ-शृंखलाके विभिन्न खंडोंमें हमने इनकी प्रचुर चर्चाकीहै. बम्बईमें १८९४ में जो प्लेग फैली और भयावह रूपमें सारे भारतमें संक्रमित होतीगई, वह १९१७-१८ तक भारतके विभिन्न अंचलोंमें जन-धनकी कल्पनातीत क्षति करतीगई. इन २०-२२ सालोंमें इस प्लेगके प्रकोपने यही एक लाखसे ऊपर लोगोंको अपना ग्रास बनाया. १९१४ में इसका प्रकोप मंडावामें भी फैला. सारा मंडावा एकप्रकारसे खालीहोगया. गांव-बाहर 'नद्दीका कुँआ' नामक स्थानपर जाकर लोग रैन-बसेरा करनेलगे. मोहनलालजीको खबर मिलनेकी देर थी, उनकी ओरसे लोगोंकेलिए छप्पर डलवायेगये, दैनंदिन भोजन सबको प्राप्तहो, इसकेलिए दालबाटीका प्रबंधकरदिया. गाड़ोंमें पेयजल भरकर प्रतिदिन वहाँ भिजवाया जानेलगा. जिनके पास गायें आदि पशु थे, उनको चारा दियागया. जिन परिवारोंके शवोंकी सद्‌गतिका सुभित्ता न था, उनको यथोचित सामग्री दीगई. श्मसानमें निःशुल्क ईंधन पहुँचायागया. यही दोमहीने यह प्रकोप रहा. मोहनलालजीकी ओरसे दो मासतक यह सेवाकार्य चलतारहाथा. फिर इसीके आस-पास एकबार मंडावामें और आसपास मलेरियाका प्रकोप फैला, तो बड़ेपैमानेपर कुनीनकी गोलियाँ बंटवाईगई. १८८० से लेकर १९१७ तक मोहनलालजीने मंडावा में कितना सार्वजनिक उपकार रचितकिया, उसका ब्यौरा क्या तो दियाजाय, क्या सुनायाजाए. इतना बतादियाजाए, कि उनकी ऐसी उदात्त प्रवृत्तियोंके कारणही लोकसमाजमें मंडावा 'मोहनलालजी सराफका मंडावा' प्रसिद्ध होतागयाथा. नाथूरामजी सराफ के स्वर्गवासके बादसे…मंडावामें वे यही दस-बारह बार गये. हरबार उन्होंने बीसियों व्यक्तियोंको आत्मनिर्भर बनाया. कलकत्तासे वे बराबर मंडावाके बहुतसे परिवारोंपर करुणाकी मधुरिमाका सदाव्रत वितरित करतेरहेथे…अकाल-सेवा, ब्राह्मण-सेवा, जवान बेटोंकेलिए जीवनयात्रापर अग्रसर होनेकी अवलंबन-सेवा, पीड़ा-ग्रस्त गाय-सेवा, धर्म-सेवा, इस तरह मौन भावसे मोहनलालजीने बहुत आयोजनकिये, पर उन्हें वे यत्किंचित ही मानतेरहे…सार्वजनिक सेवाकेलिए आगे बढ़ना एक अग्नि-परीक्षा ही देनाहोताहै. भगवती सीताजीने तो एक ही अग्निपरीक्षा दीथी. मोहनलालजीका सारा जीवन शत-शत अग्निपरीक्षाओंसे ही कुन्दन-सा तपतागयाथा, अमल-धवल परिशुद्ध होतागयाथा…कलकत्ताकी पाश्चात्य सभ्यताका कोई स्पर्श उन्हें अपनी गिरफ्तमें नहीं लेपायाथा. वे मंडावाके वरद् पुत्र बनकर ही कलकत्तामें ७७ वर्षकी आयुतक रहेथे. भारतीय वैश्य, इनकी सूक्ष्म परिभाषा क्या हो सकतीहै, उसके जीवन्त आदर्श मोहनलालजी सराफ मानेजासकतेथे. तो हम श्रीसीतारामजी सेक्सरियाका एक वाणी-अंकन, यहाँ प्रस्तुतकरें, आनंद-प्रसूत उद्‌गार हैं ये,—"मोहनलाल हीरानंदका नाम पढ़ाईलिखाईमें अर्थात् उच्च शिक्षा प्राप्त करनेमें नहीं हुआ. इनकी पाँच-छः दुकानें थीं. तो कुल एक-एक दुकानपर मिलाकर कमसे कम ५०-६० आदमी कामकरते. फर्म एक थी, दुकानें अलग-अलग भाईयोंके नामसे. ये दुकानें मोहनलालजीके सामनेही होगईथीं. जब मैंने मोहनलालजीको देखा, तब उनकी आँखें चलीगईथीं. बहुत अच्छे लगतेथे. गुलाबी रंगकी पगड़ी बाँधतेथे. दुकानपर बैठतेथे. चश्मा लगातेथे. उनका चश्मातो ऐसाही था. चश्मा उतारकर भी रख देतेथे पासमें. कमरी पहनतेथे. अंगरखी पहनतेथे. तनियोंवाली. चपकन नहीं पहनतेथे. दुपट्टा रखतेथे. पगड़ी धरतेथे. धोती ही पहना करतेथे. गाड़ीमें आतेजातेथे. और, हम लोगतो उनको चावसे देखाकरतेथे. हम लोग तो बच्चेथे, छोटे थे. वैसे भी छोटे थे. सूतापट्टीमें मोहनलालजीकी इज्जत भी बहुत थी. जो दूसरे दुकानदार थे, वे भी उनकी बहुत इज्जत कियाकरतेथे."

तो, यह दूसरा संस्मरण हुआ. अब तीसरा संस्मरण हमलें. यह सराफ वंशकी स्मृतियोंसे संग्रहीत कियागयाहै. यह संस्मरण यद्यपि मंडावाके सराफ-वंशमें, मोहनलालजीसे केवल एक पीढ़ी पहलेसे संबंधितहै, लेकिन मोहनलालजीपर किसतरह साक्षात् मृत्युका भयंकर आघात टालागया, उसकी चर्चाहै. हमारा विचारहै, कि यह संस्मरण १८७७ के आसपासका होनाचाहिए, जबकि मोहनलालजी की आयु लगभग ४० बरसकी होचुकीथी. उससमय वे केवल धनाढ्य ही नहीं थे, रईस तबीयतके घुड़सवारथे. मंडावामें ऊंट, रथ, बैल और सवारीकेलिए घोड़ा भी रखाकरतेथे. बहुत अच्छे घुड़सवार थे और कहतेहैं, कि जब घोड़ेपर सवार होतेथे, तो कमरमें तलवार भी लटकाकर चलाकरतेथे. यह बाना राजस्थानमें १८७०-८० तक सभी धनाढ्य सेठों द्वारा समान रूपसे धारणकियाजाता रहाथा.

हमने ऊपर ही बतायाहै, कि मोहनलालजीके पिताजीका नाम जयकिशनदासजी था. इनके एक छोटे भाई थे, नामथा जीवनरामजी. इनका देहान्त विवाहकेसमय होगयाथा. शायद इनकी कुलशीला नवांगना पत्नी परमेश्वरी बाई गौनावली आईथीं, उसीके आसपास होगयाथा. तो यह सतीसाध्वी पत्नी भी ज्यादा जीवित नहीं रही, और पतिके विरहमें पाँच-दस साल बाद ही दिवंगत होकर, देवात्मा-पदे होचुकीथीं. राजस्थानमें ऐसे देवात्माको, यदि वह पुरुष हुआ, तो पितर और यदि महिला हुईतो पितराणीजी कहाजाताथा. जल्दी ही इन पितराणीजीकी देवपूजा सराफ-वंशमें प्रारंभ होगई और इन्होंने भी आड़ेवक्त परिवारजनोंकी रक्षाका अपना वरद् हस्त सक्रियरखा. मोहनलालजीने व्यवसायमें जो अमित धन कमाया और अक्षय कीर्ति उपलब्धकी, उसमें इन्हीं पितराणी

जीकी महती कृपारही, ऐसा सराफ-वंशमें श्रद्धाभावसे स्वीकार कियाजातारहाहै. हम एक ऐसा दुर्लभ संस्मरण यहाँ प्रस्तुतकरतेहैं, जिसे १९८२ में हमें श्रीलक्ष्मीनारायणजीकी धर्मपत्नीने सुनाया. हम लक्ष्मीनारायणजीसे संबंधित सामग्री लेनेकेलिए जसीडीह गयेथे, जहाँपर उनका दीर्घजीवन-परक एकान्तवास चलरहाहै. सराफ-वंशमें वे ताईजी नामसे सम्बोधित होतीहैं. ताईजीने कहा :

"एक जमाना वह था, जबकि हम यहाँपर बियावली बनकर आईथीं, उस समय हमारे यहाँ तीनों भाईयोंका जो चौका लगताथा, उसवक्त ३०० आदमी जीमाकरतेथे. एकही चौकेमें उन ३०० आदमियोंकी रसोई बनाकरतीथी. उसमें जमादार, गुमाश्ते, मुनीम आदि भी खायाकरतेथे. परिवारके सभी लोग उस एकही चौकेमें बैठकर जीमाकरतेथे. ऐसे भरेपूरे परिवारमें लक्ष्मीनारायणजी सात-आठ बरसके होगयेथे. तो १८७७-७८ में सारा परिवार उनका जड़ूला उतरवानेके लिए पहले मंडावा गया, फिर सभी लोग सालासर गये. दलमें परिवारकी महिलाएँ भी थीं. यह दल रथोंमें बैठकर गया. उस समय हरिबक्सजी, आनंदरामजी, सेवारामजी— ये सभी बहली-रथमेंही बैठकर वहाँ गयेथे. इस दलके साथ दो घोड़े भी थे, प्रायः मोहनलालजी घोड़ेपरही सवारी कियाकरतेथे. और दूसरे घोड़ेपर लक्ष्मीनारायणजीको बैठायागयाथा. कहाजाताहैकि जब यह दल सालासरजी गया, तो जल्दी पहुँचनेकी दृष्टिसे, लम्बी पगडंडीपर न चलकर, किसीके बाजरेके खेतमें बहली, रथ, ऊँट उतारदिये. तब खेतके मालिक मौजूद न थे. खेतमें तीसपैंतीस बहलोंके जानेसे, बाजरेके खेतको क्षति पहुँची. बहुत-सा बाजरा नष्टहोगया. इनके आगे निकलजानेकेबाद, मालिकको अपना नुकसान देखकर रोष आया. उसने साथियों को इकट्ठा किया और वे सब मिलकर राह देखनेलगेकि जब वे बहलियाँ वापस आयें तो उनकी लाठियोंसे ठुकाई की जावे. उन्हें यह पता भी चलगयाथाकि वे मंडावाके सेठहैं. उन्होंने तयकियाकि सारे दलको यहींपर खत्म करदियाजायेगा.

"कहाजाताहैकि जब यह दल सालासरसे वापसीपर आया, तो उस खेततक पहुँचनेसेपहलेही, पितरानीजी मोहनलालजीके रूपमें प्रकटहुई' घोड़ेपर बैठकर, उन्होंने आवाज लगाईकि इधरकी पगडंडी छोड़कर उधरकी पगडंडीसे आगे बढ़ो. तो बहलों का सारा दल मोहनलालजीका आदेशमानकर, जो एकप्रकारसे छद्मवेशमें पितरानीजीका ही आदेशथा, उधरकी दूसरी पगडंडीसे आगे बढ़गया और इसप्रकार उस खेतवाला रास्ता कोसोंके फासलेसे दूसरीतरफ पड़गया. राजीखुशी सारादल मंडावा पहुँचगया. इधर मोहनलालजी काफी पीछे चले आरहेथे. उन्होंने देखाकि जो दल जिस पगडंडीसे जारहाहै, वह तो बड़ाही ऊबड़खाबड़है, गड्ढोंसे भरपूरहै, तो उन्हें हैरानीहुईकि लोग उधरसे क्यों जारहेहै. सो वे उधर से ही आगे बढ़े. मंडावाके पास पहुँचनेतक वे अपने दलके पास पहुँचे और पूछाकि इधर किसकी रायसे आये. लोगोंने कहाकि आपने ही तो आवाज देकर, उधरकी पगडंडीपर न जाकर, इस रास्तेको पकड़नाहै, यह ताकीद कीथी. मोहनलालजी बहुत हैरानकि हमने ऐसा कुछ न कहा. पर जल्द ही राज खुलगया. पता चलाकि पितरानीजीने ही आज सारेदलकी रक्षा इस रीतिसे कीथी. तब मंडावाके ठाकुरने अपने आदमी भेजकर उस खेतके लोगोंको शान्त किया. और कहलादियाकि आप लोगोंका जो नुकसान हुआहो, यहाँ आकर लेजावो. इसतरह पितरानीजीने दरशाव कियाथा".

अब हम चौथा संस्मरण लें. यह मोहनलालजीकी व्यावसायिक शालीनता और गांभीर्यका द्योतकहै. पहले घटना लें, फिर उसका महत्वांकन करें. एकबार रैली ब्रदर्सके साहबने मोहनलालजीको अपने आफिसमें बुलाकर एक माल दिखाया. शायद कोई नये किस्मका उत्पादन था. मोहनलालजीने स्वीकार करलियाकि इसे हम बेचेंगे. लेकिन बाजारमें उस मालके आनेपर आशानुरूप लाभ तो क्या होनाथा, नीचेके भावोंमें ही वह निकालागया. मोहनलालजीने देखलियाकि घाटाहुआहै, पर उसकी चर्चा किसीसे नहींकी. उधर उस मालको लेकर रैलीब्रदर्समें बात स्पष्ट होगईकि इस मालपर एक बड़ा नुकसान रैलीको भी हुआहै. लंदनसे उस साहबकी बुलाहट हुई. उसपर एक मानसिक तनाव भी आगया. पर दूरंदेशी व्यक्ति था. विलायत जानेसे पहले, उसने मोहनलालजीको बुलाया और कहाकि अमुक मालमें आपको बहुत घाटा लगाहै. ७० हजारका घाटा आपने सहाहै, तो मैं यह नुकसान नकदी रुपये देकर पूराकरना चाहताहूं. मोहनलालजीने वह नकदी रुपया लेना अस्वीकारकरदिया. सिर्फ विनय और मिठासके साथ कहाकि हम लोग व्यवसायीहैं. मुनाफा भी आपसे ही कमातेहैं. घाटा हुआहै, यह हमाराहै. आप इसमें भागीदार नहींहैं. यह नफा-नुकसान चलता ही रहताहै. साहबपर इस टिप्पणीका बहुत असर हुआ. जब विलायतसे वह साहब अपना स्वास्थ्य सुधारकर वापस आया, तो उसने तीनचार उपाय ऐसेकिये, कि मोहनलालजीको पता न चले, लेकिन उनका वह बड़ा घाटा भरपाई होजाए. साथही, व्यवसायकी कठिन समस्या उत्पन्न होनेपर वह बराबर मोहनलालजीको बड़े विश्वासके साथ गंभीर परामर्शकेलिए बुलातारहा. लंदनके रैली-ऑफिसमें भी मोहनलालजी सराफको लेकर इस घटनाको एक आदर्श भारतीय व्यवसायीकी नेकनीयतीका औसत प्रमाण मानागया.

हम क्या टिप्पणी करें. ऊपरकी घटना अपनेआपमें पूरीतरहसे सटीक है. फिर भी एक टिप्पणीकरनेका लोभ होताहै. नियोजित धन नारिकेल वृक्षपर लगे हरे नारियलकी तरह है. बंगालमें इस हरे नारियलको डाब कहतेहैं. इसमें पहले प्रचुर पेय जल होताहै. यही जल अन्दरही अन्दर शुष्क होकर कच्चा नारियल बनताहै. और भी शुष्क होलेताहै, तो सूखी गिरी वाला नारियल बनताहै. यह अदृश्य विधान ही रहताहै, कि किस डाबमें कितना पेय तरल निकले या कितना छोटा या बड़ा कच्चा नारियल बाहर आये, या सूखनेकी प्रक्रियामें वह एकदम सड़कर अखाद्य होजाए. नियोजित धन भी इसी प्रक्रियाके समानान्तर अपने मधुर फल देताहै; यदि अदृश्य विधान नहीं चाहता, तो अखरनेवाली आर्थिक क्षति भी वह उलटकर सामने रखदियाकरताहै···मोहनलालजी धनकी खेती करनेवाले कुशल खेतिहर थे. धनकी फसलमें पांच-दस सालोंमें कभी-कभी घुन भी लगताहै, इस ठोस सत्यके वे गहरे जानकारथे.

अब हम पांचवाँ संस्मरण लेलें. मारवाड़ीसमाजमें परिवार-विभाजनोंकी कहानियाँ यदि एकत्र कीजासकें, तो वह ग्रन्थ २०वींसदीका सबसे बड़ा पठनीय और उपादेय उपन्यास ही सिद्धहोगा. यहाँपर हम मोहनलालजी द्वारा निर्णीत परिवार-विभाजन की चर्चा लें. आपने १९१३ में सहसा ही एक निर्णयकियाकि परिवारका विभाजन होलेनाचाहिए. तब परिवारमें ६३ वर्षीय हरिबक्सजी थे, ४८ बरसके आनन्दरामजी थे. ४३ बरसके लक्ष्मीनारायणजी थे. ३७ बरसके सेवारामजी थे और २२ बरसके ओंकारमलजी थे. मोहनलालजी पितामह पदपर थे और उनकी आयु ७३ बरसकी होचुकीथी. बाकी उनके दो पुत्र थे और ३ भतीजे थे. इन भतीजोंका भरापूरा कुनबा था. १९१३ में एक दिन उन्हें एक प्रेरणा हुई. उन्होंने अपने पुत्रोंको और अपने भतीजोंको बुलाया. और कहा, कि अब बंटवारा होजाए. सभी सुनकर हतप्रभ. पर मोहनलालजी हतप्रभ होनेके स्थानपर उज्ज्वल दृष्टि अपने वंशके भतीजोंका प्रकाशमय भविष्य सुघड़ बनानेकी दृढ़ मनःस्थितिमें आचुकेथे.

हम इस बंटवारेका भावना-प्रधान अंश रोकलेतेहैं. वह सराफ-वंशकी अपनी निजी बहुमूल्य धरोहरहै और उनके पुत्र-पौत्रादिकी पूजाकी थालीकी तरहसे पवित्र बनीहुईहै. कायदेसे बंटवारा तीन भागोंमें होनाचाहिए था. लेकिन मोहनलालजीने यह निर्णयदियाकि नहीं, कि चतुर्भुजजीके और हीरानंदजीके परिवारमें बालक ज्यादा होगयेहैं, तो अपना हिस्से एक तिहाईसे और कम किया और बाकी दो हिस्से एकतिहाईसे कुछ ज्यादाकिये. उन्होंने हरिबक्सजीको, आनन्दरामजीको और सेवारामजीको अपने प्रिय-पुत्रोंके समान पालापोसाथा. हरिबक्सजी और आनंदरामजीके जन्मके कई बरसोंबाद उनके अपने निजी पुत्र लक्ष्मीनारायणका जन्महुआथा. पर हृदयतः उनकी संप्रीति हरिबक्सजीपर और आनन्दरामजीपर पूर्ववत ज्यादा ही रहीथी.

यदि सारे भारतके मारवाड़ीसमाजमें, बीसवींसदीके प्रारम्भिक दशकोंमें, १०१ समुज्ज्वल भावके पारिवारिक बंटवारे हुएहैं, तो उनमें मोहनलालजी सराफ द्वारा कियागया उक्त बंटवारा प्रारंभके १०-११ बंटवारोंमें ही स्थान पायेगा.

जब बंटवारा होगया, तो दुपहरतक इसकी सूचना हरिरामजी गोयेनकाको भी लगी. उन्हें सहसाही विश्वास नहीं हुआ. वे रैली ब्रदर्सके बेनियन थे. वे खुद चलकर मोहनलालजीके पास आये, क्योंकि उसदिन मालकी डिलीवरी पांति-वार भुगताईगईथी. मोहनलालजी अपनी गद्दीपर बैठे थे. हरिरामजीको आयाजानकर, प्रतिदिनकी भांति आदर-सत्कारके बाद, इससे पहलेकि हरिरामजी कुछ पूछें, मोहनलालजीने कहा, कि हमने बंटवारेके विषयमें आपसे इसलिए परामर्श नहीं लियाकि घरमें ही सानंद सारा सलटारा होगया. आप भी शायद यह नहीं चाहतेथेकि हमारे परिवारमें इस बंटवारेको लेकर कोई मनमुटाव हो. भगवान दयालुहै. हमारे परिवारमें सभी संतुष्टहैं. हरिरामजी, मोहनलालजीकी सुदीर्घदृष्टि द्वारा कियेगये बंटवारेसे, अभिभूत बनेहुए, बहुत देरतक मौन बैठेरहे···

अन्तर्बाह्य ज्योति दैवज्योतिमें विलीन हुई

१९१७ में मोहनलालजीने बहुत शांतिके साथ अपनी अन्तर्बाह्य ज्योतिको देवज्योतिमें सानन्द विलीन करदिया. बहुत सुखद मृत्यु पाई. कलकत्तामें वस्त्र-व्यवसाइयोंने एक सार्वजनिक शोक मनाया. जहाँ परिवारके सदस्योंने उनके मानमें अपने-अपने बालदिये, वहीं सर हरिरामजी गोयेनकाने भी, अपने बाल यह कहकर दियेकि आज मेरा बड़ा भाई गयाहै ! इस एक वाक्यमें मोहनलालजी सराफका और सर हरिरामजी गोयेनकाका जो ४० सालोंका, व्यावसायिक व पारिवारिक प्रगाढ़ भाव था, सबकुछ घनीभूत होकर, सुगंधित सुवास बनगयाथा··· कलकत्तामें और मंडावामें श्राद्धकी घड़ियोंमें 'सर्वबाला' कियागया.

इतिहासकी भाषामें हम कहनाचाहेंगे, कि मोहनलालजी सराफ नाथूरामजी सराफके पूर्णांक बनकर ही कलकत्तामें अवतीर्ण-हुएथे और उनकी कीर्ति-कलाप-वल्लरिको मोहनलालजीने शीर्षविन्दुतक पहुंचाकरही अपना कायावरोहण पूर्ण कियाथा. १९वींसदीके उत्तरार्द्धमें और २०वींसदीके सूर्योदय-कालमें मारवाड़ीसमाजने निरन्तर अपने प्रबुद्ध व्यक्तित्वके अन्दर जो प्रकाशपुञ्ज संचितकियाथा कलकत्तामें, उसको किरणालोकित लिपिमें लिखा जाए, तो हम कहेंगे, कि मोहनलालजीने एकहाथसे भरापूरा विदेशीवस्त्रोंका व्यवसायकिया, लेकिन दूसरेहाथसे वे उसी वस्त्रव्यवसायसे अर्जित पुण्यका ५० प्रतिशत अपने दायरेके वस्त्र-व्यवसाइयोंमें वितरित करतेरहतेथे. उसीके बाद, वे अपने तपोबलका सिंचन मंडावाके सराफ-वंशके सतत अभ्युदयके निमित्त अंजुलि भरभरकर कियाकरतेथे. आज कलकत्तामें जो भी सराफ-वंश धनधान्यसे पूर्ण और संतति-लब्ध होकर आबादहै, उस वटवृक्षका शोभनीय, पर अक्षय तना-भाग तो स्वयं मोहनलालजी सराफ ही हैं और वे उसमें जाग्रत अवस्थामें अपना तेजोमय दर्शन देदियाकरतेहैं !

हमने इस अध्यायका शीर्षक दियाहै : 'विदेशी वस्त्रके व्यवसायका अमोघ अस्त्र, शाश्वत सनातनी जीवनघूंटी पीयेहुए वैश्योंका जीवनदर्शन निरस्त्र.' यद्यपि प्रबुद्ध पाठकोंको इसका सरल अर्थ बतानेकी कोई खास जरूरत महसूस नहीं होती, फिर भी, सांकेतिक भाषामें दो वाक्य हम अवश्य लिखनाचाहेंगे. ब्रिटिशसत्ताने चाहे अपना साम्राज्य भारतमें स्थिरकिया, चाहे अपना आर्थिक षड़यंत्र, किया तोपों और संगीनोंके बलपर. पर, इसके विपरीत भारतीय वैश्य एकदम निरस्त्र रहे. इनका जीवनदर्शन भी सभी पहलुओंसे निरस्त्र ही रहा, लेकिन यह इन भारतीय वैश्योंका ही प्रबुद्ध ओजस्व रहाकि निरस्त्र रहकर भी, इन्होंने विदेशीवस्त्रके व्यवसायको अमोघ अस्त्रकी तरह गुना, गहा और ग्रहणकिया. जब भारतमें आजादीकी लड़ाई चली, तो यह अमोघ अस्त्र उस स्वतंत्रताके संग्रामके हितमें प्रयुक्तहुआ. लेकिन, जबतक वह हुआ, मोहनलालजी जीवनमुक्त होचुकेथे. [शुभइति]